

42वाँ अंक, अक्टूबर 2024 - मार्च 2025



SUPREME AUDIT INSTITUTION OF INDIA

लोकहितार्थ सत्यनिष्ठा

Dedicated to Truth in Public Interest

राजभाषा
पत्रिका

कार्यालय : प्रधान महालेखाकार (लेखापरीक्षा)
झारखण्ड, राँची



नराकास द्वारा उत्कृष्ट पत्रिका हेतु पुरस्कार ग्रहण करते हुए उप-महालेखाकार



प्रधान महालेखाकार महोदया द्वारा हिंदी पखवाड़ा समापन समारोह के दौरान प्रमाणपत्र का वितरण



कार्यालय में रक्तदान शिविर का आयोजन



राजभाषा गृह पत्रिका 'उदयाचल' के 41वें अंक का विमोचन



हिंदी कार्यशाला में उपस्थित अधिकारी एवं कर्मचारी



राजभाषा पत्रिका

पत्रिका परिवार

मुख्य संरक्षक

श्रीमती इन्दु अग्रवाल

प्रधान महालेखाकार (लेखापरीक्षा)

संरक्षक

श्री रौनक रंजन

उप महालेखाकार (प्रशासन)

प्रकाशक परामर्शदातृ समिति

श्रीमती माया कुमारी

उप महालेखाकार

श्री सदानंद नस्कर

उप महालेखाकार

संपादक मंडल

डॉ. मंजेश परासर

सहायक निदेशक (राजभाषा)

श्री शैलेन्द्र कुमार

सहायक निदेशक (राजभाषा)

डॉ. शिप्रा शालिनी आईन्द

कनिष्ठ हिंदी अनुवादक

श्री सुबोध कुमार

कनिष्ठ हिंदी अनुवादक

श्री अमर आनंद मिंज

कनिष्ठ अनुवादक

श्री राजेश साह

वरिष्ठ लेखापरीक्षक

पत्रिका में प्रकाशित सभी रचनाएँ रचनाकारों के व्यक्तिगत विचार एवं भावनाएँ हैं।
कार्यालय व संपादक मंडल का रचनाकारों के विचारों से सहमत होना आवश्यक नहीं है।





राजभाषा पत्रिका

42वाँ अंक, अक्टूबर 2024 – मार्च 2025

स्वत्वाधिकारी

प्रधान महालेखाकार (लेखापरीक्षा) झारखण्ड, राँची

प्रकाशन

'उदयाचल' (राजभाषा पत्रिका), प्रधान महालेखाकार (लेखापरीक्षा), झारखण्ड, राँची

अंक

42वाँ

आवरण एवं पत्रिका साज-सज्जा

अन्नपूर्णा प्रेस एण्ड प्रोसेस, राँची

मूल्य

राजभाषा के प्रति निष्ठा

इस पत्रिका में संकलित सभी रचनाओं में रचनाकारों के निजी विचार हैं जिनसे 'उदयाचल' परिवार का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

- संपादक मंडल





मुख्य संरक्षक की कलम से....

मुझे हार्दिक प्रसन्नता हो रही है कि हमारे कार्यालय की राजभाषा गृह पत्रिका “उदयाचल” का 42वाँ अंक आप सभी प्रबुद्ध पाठकों के समक्ष है।

एक ओर जहाँ राजभाषा की सहजता एवं सुगमता के कारण हिंदी आमजनों में सुग्राह्य भाषा है, वहीं दूसरी ओर हिंदी देश को एक कड़ी में जोड़ने का भी काम करती है, हिंदी का किसी भी अन्य भाषा से विरोध नहीं, बल्कि हिंदी अन्य भाषाओं से ही समृद्ध होती है एवं भारतीयता की भावना को सशक्त करती है। इसलिए हिंदी को कार्यालयों में ही नहीं वरन् राष्ट्रीय स्तर पर प्रथम भाषा के रूप में अपनाया जाना चाहिए, जो वैश्विक स्तर पर देश को सशक्त बना सके और यही हमारे संविधान निर्माताओं की भी सोच थी। “उदयाचल” पत्रिका का सतत प्रकाशन उसी लक्ष्य की ओर अग्रसर है।

मुझे हार्दिक प्रसन्नता है कि हम भी हिंदी की इस विकास यात्रा के सहभागी हैं एवं हमारे कार्यालय से “उदयाचल” पत्रिका का निरंतर प्रकाशन हिंदी के प्रति हमारी निष्ठा एवं समर्पण का साक्षी है।

मैं “उदयाचल” परिवार को अपनी शुभकामनाएँ देती हूँ और आशा करती हूँ कि यह आप सभी साहित्य प्रेमियों के लिए उपयोगी सिद्ध होगी।

६.५.२०१८

प्रधान महालेखाकार
(लेखापरीक्षा)





संरक्षक की कलम से

कार्यालय की गृह पत्रिका “उदयाचल” का 42वाँ अंक आपके समक्ष रखते हुए मुझे अपार हर्ष की अनुभूति हो रही है। किसी भी विभागीय पत्रिका का परम्परागत प्रकाशन गौरव की बात होती है, जो कार्यालय परिवार के सामूहिक अथक प्रयास का परिचय है। हिंदी पत्रिका के प्रकाशन से कार्यालय के कर्मियों का राजभाषा हिंदी में कार्य करने के लिए रुझान बढ़ता है। इससे कर्मियों में सृजनशीलता बढ़ती है और यह जीवन के हर पहलू को बेहतर बनाने में मदद करती है।

हिंदी के अधिक से अधिक प्रयोग के लिए आवश्यक है कि इसके बोलने-लिखने की शैली क्लिष्ट न होकर अत्यंत सरल हो, ताकि हिंदीतर देशवासी भी इसे आसानी से समझ व बोल कर अपना सकें।

“उदयाचल” को लगातार दो वर्षों से नराकास, राँची द्वारा पुरस्कृत किया गया है, जो रचनाकारों को और बेहतर सृजन करने के लिए प्रोत्साहित करती है।

आशा है यह अंक भी पाठकों के हृदय में अपना स्थान बना पाएगी, जिसे कार्यालय के कर्मियों ने अपनी रचना रूपी आहुति से प्रखर किया है।

“उदयाचल” में अपना सक्रिय योगदान देने हेतु समस्त रचनाकारों एवं संपादक मंडल के साथ-साथ पाठकों के प्रति भी मैं अपनी कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ और उम्मीद करता हूँ कि यह पत्रिका उतरोत्तर प्रगति करती रहेगी।

आप सभी के विचारों तथा सम्मतियों की प्रतीक्षा में।



शुभ शंभु

उप महालेखाकार
(प्रशासन)



संपादक की कलम से...

भाषा के संबंध में यह अवधारणा है कि यह आभूषणधर्मी अर्थात् अपने संदेश को सजा कर अभिव्यक्त करने का एक उपकरण है परन्तु ऐसा नहीं है। हम भाषा में ही सोचते हैं। भाषा के लिए भाव का होना भी आवश्यक है। इसके बिना हम तथ्यों को तो प्रस्तुत कर सकते हैं परन्तु उसके पीछे के जीवन-स्मृतियों, स्वप्नों या संवेदनाओं को संप्रेषित नहीं कर सकते। यूँ कहें कि साहित्य को लिखना और भाषा में बोलना एक बात है और लिखी हुई भाषा का अध्ययन करना दूसरी बात है। उदाहरण के लिए, वाल्मिकी, प्रेमचंद और कालिदास जैसा साहित्यकार होने के लिए आपका भावुक होना बहुत आवश्यक है। ठीक उसी तरह गरीबों, वंचितों और शोषितों की स्थिति को बिना संवेदनशील हुए भाषा में अभिव्यक्त नहीं किया जा सकता है। उन्हें समझने के लिए भी पाठकों का भावुक होना और यथार्थ से परिचित होना अत्यंत आवश्यक है। ये अभिव्यक्ति अपनी भाषा में जितने बेहतरीन ढंग से की जा सकती है, दूसरी भाषा में नहीं। न केवल राष्ट्रीय वरन् अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी हिंदी हमारे भावों, विचारों की अभिव्यक्ति का सबसे सशक्त माध्यम है। आज हिंदी अपनी पहचान के लिए संघर्ष कर रही है, जिसका एक महत्वपूर्ण कारण यह है कि हम अपनी भाषा को तरजीह न देकर विदेशी भाषाओं पर आश्रित हो गए हैं। इस कारण हम न केवल अपनी सभ्यता, संस्कृति वरन् उनमें संचित अमूल्य ज्ञान से भी अपरिचित हैं। कई विदेशी लेखकों ने हमारे पौराणिक शास्त्रों, उपनिषदों आदि में संचित ज्ञान के भंडार को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से परिपूर्ण होने के साथ-साथ आज के विज्ञान से कहीं उन्नत बताया है लेकिन हम इन्हें पढ़ना भी पसंद नहीं करते हैं। पहले ग्रामीण परिवेशों में अपनी भाषा के अत्यधिक प्रयोग के कारण हमारे संस्कार, हमारा ज्ञान किंवदंतियों एवं कहानियों के रूप में अगली पीढ़ी तक पहुँचाया जाता था परन्तु आज अपनी भाषा से दूर होने के कारण हमारे अपने संस्कार, ज्ञान दृष्टिगोचर ही नहीं होते। हम कहते हैं कि भाषा संस्कृतियों की वाहक होती है लेकिन हम अपनी ही भाषा के प्रयोग से कतराते हैं।

हमारे संविधान निर्माताओं ने इन महत्वपूर्ण बिंदुओं को ध्यान में रखकर ही राजकाज को अपनी ही भाषा में करने का निर्णय लिया और केंद्र सरकार के कार्यालयों में कामकाज को हिंदी में करना सुनिश्चित किया। आज हिंदी का प्रयोग काफी बढ़ा है, इससे इनकार नहीं किया जा सकता है परन्तु सफर अभी बाकी है। जब हिंदी राष्ट्रीय स्तर पर सर्वमान्य और सभी के द्वारा प्रयोग में लायी जाने लगेगी, तभी राजभाषा का उद्देश्य अर्थपूर्ण होगा।

कार्यालय द्वारा प्रकाशित यह पत्रिका इसी उद्देश्य की प्राप्ति हेतु एक छोटा सा कदम है, जिसे कार्यालय के कर्मों अपनी भाषा में अभिव्यक्तियों के माध्यम से पूर्ण करने का प्रयास कर रहे हैं। आशा है यह मशाल एक दिन पूरे विश्व को प्रकाशित करेगा।

पत्रिका में योगदान देने वाले सभी रचनाकारों, संपादक मंडल एवं मार्गदर्शन करने वाले सभी वरिष्ठ अधिकारियों का आभार व्यक्त करता हूँ एवं आगे भी सहयोग की कामना करता हूँ।



डॉ. मंजेश परासर
सहायक निदेशक (राजभाषा)



संपादकीय

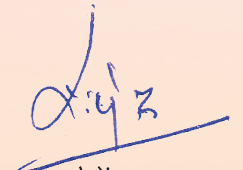
भाषा की वीचि से ही हम अपने मन में उत्कीर्ण भावनाओं के वेग को व्यक्त करते हैं। इस तरह बड़ी ही सहजता से भाषा की सहायता से हम अपनी संस्कृति व ज्ञान को अगली पीढ़ी तक हस्तांतरित कर पाने में सफल होते हैं। भारत जैसे विकासशील देश में जहां विभिन्न समुदाय के लोगों का वास है वे आपस में भाषा से ही आपसी तिमिर को प्रकाशवान तथा सदियों से अपनी परंपराओं का संचार करते आ रहे हैं। सभी भारतीय भाषाओं में अलौकिक माधुर्य है जो उनके प्रयोग की विधियों तथा शब्दों के चयन से परिलक्षित होती है। साथ ही विश्व की सभी भाषाएं बहुत ही सुंदर व सभी प्रकार के भावों को व्यक्त करने में सक्षम हैं। भाषा की समृद्धि के लिए आवश्यक है कि हम अपनी भाषा में अन्य सभी सहोदर भाषाओं का निरंतर प्रोक्षण कर इसे आगे बढ़ाएं। भाषा को समृद्ध करना हम सभी का संवैधानिक दायित्व भी है।

किसी भाषा की ऋजुता में ही इसकी विशिष्टता होती है। हिंदी भाषा अपने आप में बहुत ही सरल एवं सुग्राही है और यही कारण है कि भारत में उदीच्य से दक्षिण तक हिंदी एक संपर्क भाषा के रूप में अथक कार्य करती आ रही है।

इतिहास से हम यह सीखते हैं कि जो देश भाषायी रूप से अकिंचित हो गए वे अपने सिरमौर को बचाने में असफल हो गए। स्वतंत्रता के उपरांत जिस तरह हम विशुद्ध रूप से विदेशी भाषाओं को राज काज में सींचते गए वो हमें एक राष्ट्र के रूप में विश्वपटल पर भाषायी तौर पर अंधकार में ले गया। वहीं दूसरी ओर जर्मनी, फ्रांस, चीन, जापान आदि अनेक देश अपनी अपनी भाषा में विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी में आधुनिक शिक्षा का विस्तार करते गए और शनैः शनैः सफलता का सोपान उनका स्वागत करती गई। इजराइल ने अपने मृतप्राय हो चुकी हिब्रू भाषा को जिस प्रभावी ढंग से पुनर्स्थापित किया है वह उस राष्ट्र की इच्छा शक्ति का अद्भुत एवं अनुकरणीय उदाहरण है।

हम सभी भारतवासी को इनसे प्रेरणा लेकर राष्ट्रहित में हिंदी के गौरव को पुनः शीर्षोन्मुखी बनाने के लिए सदैव प्रयासरत रहना चाहिए। मुझे विश्वास है कि हम सब का गिलहरी प्रयास शीघ्र ही हिंदी की गौरवगाथा को विश्वपटल पर स्थापित करने में सफल होगा।




शलेंद्र कुमार

सहायक निदेशक (रा.भा.)



अनुक्रमणिका

क्र.	शिर्षक	लेखक	पृष्ठ सं.
1	छोटानागपुर की मल्लिका नेतरहाट	कुंदन कुमार	8
2	श्राप या वरदान-विधि का विधान	इन्द्र कुमार झा	11
3	हाथ पकड़ कर माई का	दिलीप कुमार मिश्रा	13
4	क्या बचपन सच में जा रहा है?	दीप्ति कुमारी	13
5	जिम्मेदार लड़के	अजित कुमार तिवारी	14
6	वृद्धाश्रम	शंभू शरण भारती	15
7	आशादीप	आलोक कुमार	16
8	ये जिंदगी दुबारा मिले ना मिले	सदानन्द नस्कर	16
9	नीम का पत्ता	अमर आनंद मिंज	17
10	प्रदूषण एवं संरक्षण	राजेश साह	19
11	अनुवादवाला	शैलेन्द्र कुमार	21
12	आधुनिक जीवन की जटिलताएँ	बीरेन्द्र यादव	25
13	भोजन की बर्बादी: एक गंभीर समस्या	अमित कुमार रवि	26
14	पैनेसिया	दीप नारायण	29
15	एहसास	बिनोद कुमार प्रभात	33
16	वाणी	शिप्रा शालिनी आईन्द	35
17	तमाशा	सुबोध कुमार	38
18	भूतिया नम्बर	सुनैना कुमारी	39
19	आंतरिक शक्ति अर्थात इम्यूनिटी	रीतिका मोनी	40
20	बाजी	डॉ. मंजेश परासर	42

छोटानागपुर की मल्लिका नेतरहाट

“जंगल हूँ मैं, मंगल हूँ मैं। नेचर हाट हूँ, नेतुर हाट भी हूँ मैं।
प्रेम हूँ, दीवानगी भी। सुबह हूँ मैं, शाम हूँ मैं।
शिक्षा हूँ, खेती नाशपाती का। कल-कल करता झरना हूँ मैं,
बहा नदी अन्नदाता हूँ मैं। झारखण्ड का श्रृंगार हूँ मैं।
आखिर छोटानागपुर की मल्लिका नेतरहाट हूँ मैं।”

नेतरहाट झारखण्ड राज्य में स्थित छोटानागपुर पठार का हिस्सा है और यह पठार की सबसे ऊँची पहाड़ी है। इसे छोटानागपुर की मल्लिका (क्वीन ऑफ़ छोटानागपुर) के उपमा से भी अलंकृत किया गया है। नेतरहाट की खूबसूरत वादियाँ, जलप्रपात और हरी-भरी पहाड़ियाँ सैलानियों को पूरे साल अपनी ओर आकर्षित करती हैं। यहाँ से ऊँची-ऊँची चोटियों व खाईयों से विहंगम दृश्यों की सुंदरता देखते ही बनती है। यहाँ की वादियों में चलने वाली ठंडी हवा मन के तार को बरबस ही छेड़ने लगती है।

नेतरहाट का कुछ हिस्सा गुमला जिले के बिशुनपुर, तो कुछ हिस्सा लातेहार जिला के महुआडांड में पड़ता है। यह राँची से 156 किलोमीटर, लातेहार से लगभग 130 किलोमीटर, पलामू से 145 किलोमीटर और गुमला से 130 किलोमीटर पर स्थित है। समुद्र तल से 3761 फीट की ऊँचाई पर घनघोर जंगलों के बीच स्थित है। यहाँ ठहरने के लिए पर्यटन विभाग, वन विभाग और लातेहार प्रशासन का अतिथि निवास एवं निजी होटल हैं। यहाँ बस एवं प्राइवेट गाड़ियों से पहुँचा जा सकता है।

नेतरहाट का मतलब है बाँस (नेतुर) का बाजार। बाँस के पेड़ लंबे और खुशबूदार होते हैं। बाँस की अधिकता के कारण इस स्थान का नाम नेतरहाट पड़ा। नेतरहाट का मतलब आँखों का बाजार भी बताया गया है, क्योंकि यहाँ अनेकों मनमोहक दृश्य मौजूद हैं। यह भी कहा जाता है कि पहले नेतरहाट को नेचर हाट के नाम से जाना जाता था, जो बाद में अपभ्रंश होकर नेतरहाट हो गया। नेतरहाट यात्रा की योजना फ़रवरी या मार्च में बनाएँ, जो निस्संदेह इस जगह की यात्रा करने के लिए सबसे अच्छा समय

है, क्योंकि प्राकृतिक उन आगंतुकों का स्वागत करने के लिए झुकती हुई प्रतीत होती है जो इस गंतव्य द्वारा प्रदान किया जाने वाले अद्भुत यात्रा अनुभव हैं।

एक बार जो नेतरहाट चला गया, वह नेतरहाट को जिंदगी भर नहीं भूल सकता। अपर घाघरी, लोअर फॉल, सनसेट प्वाइंट (मैग्नोलिया प्वाइंट), सनराइज प्वाइंट, शैले हाउस, नेतरहाट स्कूल, नाशपाती बगान आदि की सुंदरता नेतरहाट की खूबसूरती में चार चाँद लगा देते हैं।



कुंदन कुमार
व.ले.प.अ.

ऊपरी घाघरी झरना

नेतरहाट से चार किलोमीटर दूर यह जगह प्रसिद्ध पिकनिक स्थल के रूप में जाना जाता है। यहाँ की प्राकृतिक सुन्दरता के बीच पिकनिक मनाने का अपना अलग ही मजा है। यहाँ पहुँचने के लिए नेतरहाट के गाँव नवटोली होते हुए जाना पड़ता है।



निचला घाघरी झरना

नेतरहाट से लगभग नौ किलोमीटर की दूरी पर निचला घाघरी है। घने जंगलों के बीच से गुजरते इस झरने की सुन्दरता मनमोहक है। 32 फीट की ऊँचाई से गिरते हुए जलप्रपात को देखने पर्यटक यहाँ आते हैं।

सूर्योदय स्थल (सनराइज प्वाइंट)

नेतरहाट के मुख्य आकर्षणों में से एक सूर्योदय स्थल है, जो क्षितिज से ऊपर उगते सूरज का एक मनमोहक दृश्य प्रस्तुत करता है, जो आकाश को जीवंत रंगों में चित्रित करता है। यह सुरम्य सेटिंग हरे-भरे जंगलों और पठारी क्षेत्र की प्राकृतिक सुंदरता से घिरी हुई है। जैसे ही सूरज की पहली किरणें हरे-भरे परिदृश्य पर पड़ती हैं, आगंतुकों को एक जादुई अनुभव होता है, जिससे यह फोटोग्राफरों के लिए स्वर्ग बन जाता है। सनराइज प्वाइंट आसपास के क्षेत्र का एक मनोरम दृश्य प्रदान करता है, जिसमें राजसी पहाड़ियाँ और घनी वनस्पतियाँ शामिल हैं जो नेतरहाट क्षेत्र की विशेषता हैं। शांत वातावरण और प्रकृति का सामंजस्य इसे ध्यान और आत्मचिंतन के लिए एक आदर्श स्थान बनाता है।



सूर्यास्त स्थल (सनसेट प्वाइंट)

नेतरहाट से सूर्यास्त स्थल की दूरी लगभग 10 किलोमीटर है। यहाँ सूर्यास्त का बेहद खूबसूरत नजारा दिखाई देता है। डूबते सूरज के अद्भुत नजारे और उसकी मद्धिम रोशनी से सुनहरे हो आसमान के सुंदर नजारे को देखने के लिए पर्यटक सूर्यास्त स्थल पर समय से पहले ही जमा होते लगते हैं।

शैले हाउस

सन् 1919 में तत्कालीन ओड़िसा-बिहार के गवर्नर एडवर्ड गेट लेफ्टिनेंट ने शैले हाउस का निर्माण शैल के पेड़ से कराया था। इसे आज धरोहर के रूप में देखा जाता है। शैले हाउस एक ट्री (लकड़ी) हाउस है। इस भवन का निर्माण सौ फीसदी लकड़ी से की गई है। उस वक्त शैले हाउस में सारी सुविधाएँ मौजूद थीं, गुप्त रास्ता, टेनिस स्काउट, फ्रूट बगान, दर्जी रूम, टी पार्टी गार्डन आदि थे। वर्ष 1920 में लगाया गया पेड़, हाउस के प्रांगण में आज भी मौजूद है।



नेतरहाट में ब्रिटिश गवर्नर और उसका परिवार प्राकृतिक सौंदर्य के आकर्षण से छुट्टी बिताने के लिए आते थे, जो सप्ताह एवं महीनों भर यहाँ रहकर शैले हाउस में अपने कार्य को संपादित करते थे। अंग्रेज गवर्नर की बेटी मैग्नोलिया, इसी हाउस में अपने पिता के साथ रहती थी।

ब्रिटिश अधिकारी की बेटी व चरवाहे की अधूरी प्रेम कहानी

नेतरहाट की बेपनाह खूबसूरती अगर सैलानियों को बार-बार आमंत्रण देती है, तो एक ब्रिटिश अधिकारी की बेटी मैग्नोलिया और स्थानीय आदिम जनजाति विरजिया समुदाय के गड़ेरियाँ की अमर प्रेम कहानी आज भी यहाँ की फिजाओं में तैरती है। यहाँ एक जगह है मैग्नोलिया प्वाइंट जहाँ पर एक आदिवासी लड़के और एक अंग्रेज लड़की की मूर्ति है जिन्हें देखकर वर्षों से सुनाई जा रही दोनों की प्रेम कहानी बार-बार जीवंत हो उठती है।



एक ब्रिटिश अधिकारी को नेतरहाट बहुत पसंद था। वह सपरिवार नेतरहाट घूमने आया और वहीं रहने लगा। उसकी एक बेटी थी जिसका नाम मैग्नोलिया था। नेतरहाट गाँव में ही एक चरवाहा था, जो सनसेट प्वाइंट के पास प्रतिदिन आता था और अपने मवेशियों को चराता था। मवेशी चराने के दौरान वह सनसेट प्वाइंट पर बैठ जाता था, फिर वह मधुर स्वर में बांसुरी बजाता था।



चरवाहे की बाँसुरी की मधुर आवाज ने मैग्नोलिया के दिल को छू लिया। मन ही मन वह बाँसुरी बजाने वाले से प्रेम करने लगी। वह उससे मिलने के लिए बेकरार हो गयी। उसकी दीवानगी में मैग्नोलिया भी सनसेट प्वाइंट के पास आने लगी। दोनों एक-दूसरे के बेहद करीब आ गये। मैग्नोलिया घर से भाग कर हर दिन सनसेट प्वाइंट के पास चली जाती। यहाँ चरवाहा उसे बाँसुरी बजा कर सुनाता था।

बेटी के प्रेम की सूचना ब्रिटिश गवर्नर तक पहुँची। वह आग बबूला हो गया। पहले उसने, उसे मैग्नोलिया से दूर रहने की नसीहत दी। लेकिन, प्यार में डूबे चरवाहा ने मैग्नोलिया से दूर जाने से मना कर दिया।

गुरुसे में आकर ब्रिटिश अधिकारी ने, चरवाहा को खाई में फेंकवाकर हत्या करवा दी। मैग्नोलिया प्रेम विरह में बेचैन होकर रोज घोंड़े पर बैठकर वादियों में चरवाहे को ढूँढती थी। एक दिन, उसे पता चला कि उसके पिता ने चरवाहे को खाई में फेंकवा दिया है। वह रो पड़ी। चरवाहे की मौत से आहत मैग्नोलिया घोंड़े के साथ सनसेट प्वाइंट पहुँची और घोड़ा सहित उसी खाई में छलांग लगा कर उसने अपनी जान दे दी। इस तरह इन वादियों में, एक अधूरी प्रेम कहानी अमर हो गई। नेतरहाट में, वह पत्थर आज भी मौजूद है, जहाँ बैठकर चरवाहा बाँसुरी बजाता था। प्रशासन ने इस स्थल को बेहद खूबसूरती से सजाया है।

नेतरहाट आवासीय विद्यालय

श्री फ्रेडरिक गॉर्डन पीयर्स, इंडियन पब्लिक स्कूल आंदोलन के संस्थापक और नेतरहाट विद्यालय की स्थापना के प्रमुख स्तंभों में से एक थे। वर्ष 1952 में और 15 नवंबर, 1954 को नेतरहाट में लड़कों के लिए आवासीय विद्यालय गुरुकुल की तर्ज (हिंदी माध्यम) पर किया गया था, जिसके पहले प्रिंसिपल चार्ल्स जेम्स नेपियर थे। पहले भारतीय प्रिंसिपल राधा सिन्हा थे। 60 छात्रों के पहले बैच को, वर्ष 1954 में छह साल के पाठ्यक्रम के लिए प्रवेश दिया गया था। वर्ष 2020 में इसे इंग्लिश माध्यम (सीबीएसई) की मान्यता मिली।

इस विद्यालय में गुरुकुल प्रथा आज भी कायम है। यहाँ के आवासीय विद्यालय से पढ़े कई छात्रों ने राष्ट्रीय-अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अपनी छाप छोड़ी है। पूर्व छात्र संघ को NOBA-नेतरहाट ओल्ड बॉयज़ एसोसिएशन के नाम से जाना जाता है। विद्यालय परिसर के बगीचे में कचनार और कैसिया प्रजाति के फूल हैं।



नाशपाती (देवताओं का फल) का बागान

चीड़ के पेड़ों के बीच नाशपाती बागान, यहाँ का आकर्षण का केंद्र है। प्रख्यात कवि होमर ने अपने महाकाव्य 'Odyssey' में नाशपाती को 'देवताओं का फल' कहा है। नेतरहाट में जहाँ कृषि विभाग द्वारा बड़े पैमाने पर इसका उत्पादन होता है, वहीं ग्रामीण भी, अब इसकी खेती से जुड़ गए हैं। नाशपाती बागान देखकर मन में नाशपाती खाने की बेचैनी बढ़ जाती है। जुलाई और अगस्त में नाशपाती की तुड़ाई की जाती है।



लोथ जलप्रपात (बुढ़ा घाघ)

छत्तीसगढ़ के पठार क्षेत्र से बूढ़ा नदी प्राकृतिक सौंदर्य से परिपूर्ण सघन वनों, चट्टानों को पार करते हुए जब ऊँचाई से गिरती है, तब इसकी धारा पर्यटकों का मन मोह लेती है। यह नेतरहाट से 62 किलोमीटर की दूरी पर है। महुआडांड का लोथ जलप्रपात (बुढ़ा घाघ के नाम से भी जाना जाता है) झारखण्ड का सबसे ऊँचा झरना (143 मीटर) है और भारत का 21वाँ सबसे ऊँचा झरना है। यहाँ ऊपर तक जाने के लिए लकड़ी एवं लोहे के रेलिंग लगाए गए हैं।

श्राप या वरदान-विधि का विधान



इन्द्र कुमार झा

वरिष्ठ लेखापरीक्षा
अधिकारी

किसी को केवल सुख अथवा केवल दुःख नहीं मिलता। दुःख और सुख रथ के दो पहियों की भाँति कभी ऊपर और कभी नीचे रहा करते हैं। स्वयं भगवान को भी मानव रूप धारण करना पड़ा है और अनेक अवसरों पर उन्हें ऋषि-मुनियों द्वारा श्राप का भागी भी बनना पड़ा है। हम अपने पौराणिक कथाओं में पाते हैं कि ऋषि-मुनिगण किसी के अत्याचार, अनाचार या स्वयं अपमानित होने पर क्रोध में आकर अपनी अंजुली में जल भरकर उसे श्राप दे देते थे, परन्तु कभी-कभी श्रापित व्यक्ति द्वारा मनुहार करने पर उस श्राप से निकलने का रास्ता भी बता दिया करते थे। साथ ही कभी-कभी कोई मनुष्य या अन्य जीव घोर तपस्या कर अपनी तपोबल या भक्ति से त्रिदेव यानी ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश या अन्य देवी-देवताओं के अलावा महान ऋषियों को खुश कर देता था तो उसे वर माँगने के लिए कहे जाने पर मनोवांछित वरदान मिल जाता था। यदि उसका माँगा हुआ वर देना संसार के संचालन में बाधा डालने वाला होता, तब फिर या तो वे उसे अपने द्वारा माँगे गये वर में संशोधन करने को कहते या स्वयं ही संशोधन कर देते थे। हम पौराणिक ग्रंथों में पाते हैं कि अधिकांश असुरों ने अपनी घोर तपस्या से त्रिदेवों को प्रसन्न कर अमर होने का वरदान तो पा लिया किंतु किसी-न-किसी अपवाद के साथ। यही अपवाद उसके मृत्यु का कारण बना। माँ दुर्गा को महिषासुर-मर्दिनी कहा जाता है। महिषासुर ने घोर तपस्या से ब्रह्मा जी को प्रसन्न कर लिया और उनसे वरदान माँगा कि केवल स्त्री जाति के द्वारा ही मेरी मृत्यु हो, नहीं तो किसी के द्वारा नहीं। उसने अभिमानवश सोचा कि मुझ महाबलशाली को कोई स्त्री क्या मार सकेगी? ब्रह्मा जी ने तथास्तु कह दिया। देवी भागवत पुराण या दुर्गा सप्तशती के पाठ से हम पाते हैं कि सभी देवताओं के तेज से उत्पन्न एक स्त्री रूप में माँ दुर्गा (जगदंबा) ने स्वयं युद्ध मैदान में महिषासुर का वध किया।

वरदान और श्राप का सबसे सुंदर उदाहरण हमें वाल्मीकि रामायण, श्री रामचरितमानस आदि रामकथा से प्राप्त होती है। आदिकवि वाल्मीकि ने क्रौंच-मिथुन में से एक के वध के कारण दूसरे की विरहजन्य पीड़ा से द्रवित होकर

उन्होंने क्रौंच-वध के दोषी निषाद को श्राप तो दे दिया कि तुझे कभी भी कहीं भी प्रतिष्ठा नहीं मिले पर इस श्राप को देते समय उनके मुख से जो श्लोक निकला वह विश्व का प्रथम अनुष्टुप छंद बन गया और प्रायः इसी छंद में संपूर्ण रामायण और तत्पश्चात् अनेक धार्मिक ग्रंथों की रचना होती रही।

रामायण की ही कथा के अनुसार राजा दशरथ ने शिकार के समय जब मातृ-पितृ भक्त श्रवण कुमार को भूल से अपने शब्द-भेदी बाण से भेद डाला और मृत्यु के समय उसकी अंतिम इच्छा के पालन में उसके माता-पिता को पिलाने के लिए जल ले गए तब सारी घटना जानकर उन वृद्ध और अंध दंपति ने राजा दशरथ को श्राप दिया कि जिस प्रकार हम पुत्र वियोग में प्राण तज रहे हैं, उसी प्रकार तू भी पुत्र वियोग में अपने प्राण त्यागेगा।

रामायण की ही कथा के अनुसार राजा दशरथ जो देव-दानवों की लड़ाई में स्वर्ग के देवताओं की मदद के लिए गये थे और इसी प्रसंग में एक युद्ध में उनकी रानी कैकेई ने उनकी प्राण रक्षा की। प्रसन्न होकर राजा दशरथ ने रानी कैकेई को दो वरदान देने का वादा किया था। रानी कैकेई ने दासी मंथरा के बहकावे में आकर अपने पुत्र भरत को अयोध्या की राजगद्दी और राम के लिए चौदह वर्ष का वनवास माँगा। ये अलग बात है कि उसका ये वरदान अभिशाप बन गया। राजा दशरथ को श्रवण कुमार के माता-पिता के दिये श्राप के परिणामस्वरूप पुत्र वियोग में अपने प्राण त्यागने पड़े। कैकेई को पति वियोग सहना पड़ा। जिस पुत्र भरत के लिए उसने गद्दी माँगी उस पुत्र के मुंह से उसे गालियां सुननी पड़ीं- "क्यों न तेरे मुंह में कीड़े पड़ गये? क्यों न तेरी जीभ गल गयी?" पुत्र भरत राजगद्दी पर बैठने की बात तो दूर राजधानी से दूर रहकर तपस्वी का-सा जीवन बिताता रहा और कैकेई ग्लानि में गलती रही।

दशहरा में रावण दहन की परंपरा रही है। परन्तु रावण ने तो अपनी घोर तपस्या से ब्रह्माजी को प्रसन्न कर अमर होने का वरदान मांगा था। ब्रह्मा जी ने इसे सृष्टि के नियमों के विपरीत बताकर उससे यह कहा कि तुम माँग लो कि तुम किसके हाथ से मरना चाहते हो। रावण ने माँगा, "बन्दर और मनुष्य को छोड़कर मैं किसी के हाथ से न मरूँ।" ब्रह्मा जी ने "तथास्तु" कहा। रामायण से हम पाते हैं कि रावण तो अपने अहंकार में मनुष्य और बन्दर को निर्बल





मानकर अपने को अमर ही मानने लगा और परमशक्तिशाली समझते हुए देवताओं को भी अपने लंका नगरी में कैद कर लिया। सृष्टि के संचालन और विधि के विधान से स्वयं भगवान को त्रेता युग में मनुष्य का रूप धारण करना पड़ा। रामावतार में स्वयं नारायण ने मनुष्य रूप में रावण का नाश किया। राम के छोटे भाई लक्ष्मण जो शेषावतार थे, ने रावण के पुत्र मेघनाथ, जिसे अनेक सिद्धियां प्राप्त थीं और उसे वही परास्त कर सकता था जिसने निद्रा पर विजय प्राप्त कर ली हो, को परास्त किया था। क्योंकि, उन्होंने निद्रा पर विजय पायी थी। इसी कारण वनवास के समय लक्ष्मण जी ने राम-सीता के साथ जंगल में रहकर निशाचरों से रात भर पहरेदारी की।

श्री रामचरितमानस में नारद-मोह के प्रसंग में नारद ने एक स्वयंवर में जाने से पहले भगवान विष्णु से हरि का रूप माँगा। भगवान ने हरि का अर्थ "स्वयं" के रूप में न लेते हुए श्लेष के प्रयोग से "वानर" लिया और उन्हें वानर का रूप दे दिया। स्वयंवर में राजकुमारी के द्वारा अपने वानर रूप के कारण अपमानित नारद ने जब अपना चेहरा जल में देखा तो उन्हें विष्णु भगवान के इस षड्यंत्र का पता चला और उन्होंने भगवान को श्राप दे डाला- "तुमने मुझे वानर-रूप दिया है, तुम्हें नर अवतार में वानरों की ही सहायता लेनी पड़ेगी"। इसी श्राप के परिणामस्वरूप मनुष्य रूप में राम के रूप में रावण से युद्ध के लिए वानर सेना की ही मदद लेनी पड़ी।

राम-रावण युद्ध में एक और श्राप जो वानर नल और नील को मिला था, लंका नगरी तक पहुँचने में सहायक बना। नल और नील नामक वानर ऋषि-मुनियों द्वारा पूजी जाने वाली पत्थर की प्रतिमाओं को कौतुहलवश पानी में डुबा देते थे तो उन्हें ऋषि-मुनियों द्वारा श्राप मिला था कि भविष्य में तुम्हारे द्वारा पानी में डाला हुआ कोई भी पत्थर पानी में डूबेगा ही नहीं। जब राम की सेना लंका कूच की और रास्ते में सागर रूपी बाधा आई तो नल-नील द्वारा सागर में डाला गया पत्थर डूबा नहीं और सागर पर पुल बन गया। जिससे राम की सेना सहजता से लंका पहुँच गयी।

महाभारत के अनुसार, कर्ण को परशुराम से झूठ बोलने के कारण यह श्राप मिला था कि जो विद्या उसने सीखी है, वह सबसे ज्यादा आवश्यक होने के अवसर पर विस्मृत हो जाए। अर्जुन के साथ युद्ध के समय उसे इस श्राप के परिणामस्वरूप परास्त होना पड़ा। भगवान श्रीकृष्ण से मिले श्राप के परिणामस्वरूप अश्वत्थामा अमर होकर आज भी भटक रहा है क्योंकि उसने द्रौपदी के पुत्रों का सोते समय वध कर दिया था। फिल्म "कल्कि" में अश्वत्थामा के चरित्र को दिखाया गया है।

पांडु को भी श्रापवश अपने प्राण त्यागने पड़े।

देव-दानवों की लड़ाई में राजा मुचुकंद ने देवताओं की सहायता कर उन्हें विजयी बनाया और वरदान स्वरूप अपने लिए दीर्घनिद्रा माँगी। उन्होंने एक गुफा में आराम करते हुए निद्रा में लीन होने का वर माँगा और यह भी माँगा कि जो उसकी निद्रा में खलल डालेगा, वह तुरंत भस्म हो जायेगा। द्वापर में भगवान श्रीकृष्ण ने जरासंध द्वारा भेजे गये कालनेमी को इसी गुफा में प्रवेश करा दिया और जब कालनेमी ने मुचुकंद को श्रीकृष्ण समझकर नींद से जगा दिया, तो वरदान के अनुसार वह तुरंत भस्म हो गया।

पांडवों की माँ कुंती को वरदान स्वरूप देवताओं के आवाहन का वर प्राप्त था। पांडु द्वारा संतान उत्पन्न नहीं होने के पश्चात् उन्हें वंश वृद्धि हेतु देवताओं के आवाहन का सहारा लेना पड़ा और उन्हें युधिष्ठिर, भीम और अर्जुन सदृश तेजस्वी पुत्र प्राप्त हुए।

पांडवों की पत्नी द्रौपदी को वनवास के समय सूर्यदेव से अक्षय पात्र मिला था, जिससे सबका पेट भर जाता था। पुराणों के अनुसार, तारकासुर का वध भगवान शिव से उत्पन्न पुत्र के हाथों ही लिखा था। नतीजतन भगवान शिव के पुत्र देव सेनापति कार्तिकेय ने तारकासुर का वध किया।

सुहागिनों का त्योहार "वटसावित्री" सती सावित्री की तपस्या और बुद्धिमत्ता की कहानी है जिसने अपने तपोबल से यम देवता से अपने को सुहागिन और पुत्रवती होने का वर प्राप्त कर लिया। जबकि, उनके पति की आयु समाप्त हो चुकी थी। इस प्रकार, यमदेवता अपने दिए वचन वरदान के परिणामस्वरूप सावित्री के पति सत्यवान को जीवनदान देने के लिए विवश हो गये।

कठोपनिषद् में यमराज द्वारा नचिकेता को वरदान मिलने का प्रसंग आया है जिसे हम लोगों ने बचपन में पढ़ा था।

महाभारत, रामायण सहित सभी पुराणों एवं अन्य धर्मग्रंथों में श्राप और वरदान के अनेकों प्रसंग मिलते हैं जिसका उद्देश्य अंततः विधि के विधान को पूरा करना होता था। भले ही भगवान को ही क्यों न धरा पर अवतार लेना पड़े।

श्राप और वरदान की गाथा हमारे प्राचीन धर्मग्रंथों, पुराणादि में इतनी अधिक वर्णित की गयी है जिसे इस छोटे से लेख में वर्णित करना संभव नहीं है। एक बात ध्रुव सत्य है कि श्राप और वरदान का संयोग विधि के विधान को सही साबित करने के लिए ही हुआ था, है और होगा।

हाथ पकड़ कर माई का



दिलीप कुमार मिश्रा
स.ले.प.अ.

हाथ पकड़ कर माई का, मैंने था, चलना सीखा,
बाबा के कांधे पर बैठ, मैंने दुनिया देखा।।
छोटी सी पर बड़ी सलोनी, थी अपनी जिंदगानी,
न कल की फिकर थी, न कल की थी चिंता,
करता रहता था मनमानी,
न जाने क्यों; बड़ा हो गया, खुद पैरों पर खड़ा हो गया।।

हाथ नहीं अब माई का वो, ना बाबा का कांधा,
लोभ, मोह और काम, क्रोध ने; कस के जकड़ के बांधा,
निश्छल मन भया, भोग विलासी,
मन तृष्णा संग लागा।

सब कुछ खो कर, भी मैं खुश था,
कैसा था मैं अभागा।।
हाथ पकड़ कर।

(सच्ची खुशी साथ रहने में है)

क्या बचपन सच में जा रहा है?



दीप्ति कुमारी
पुत्री श्री दीप नारायण
(सहायक लेखापरीक्षा
अधिकारी)

क्या बचपन सच में जा रहा है?
बड़े कहते हैं, बचपन जा रहा है।
लेकिन मुझे यह क्यों नहीं समझ आ रहा है?
कक्षा तो बदल रही है,
और दोस्त भी नये बन रहे हैं।
मुझे लगता है, मेरा बचपन कभी नहीं जाएगा।
बड़े कहते हैं, बचपन जा रहा है।
लेकिन मेरा पसंदीदा खिलौना
मुझे अभी बुला रहा है।
अभी-अभी तो पापा माने,
कल ही तो मेरा साइकिल आ रहा है।
बड़े कहते हैं, बचपन जा रहा है।
पर दिल में इसे बचाकर रखूंगा।
हमेशा दोस्ती करूंगा;
हो जाऊँ मैं कितना भी बड़ा,
बचपन अपना सदा
प्यारी यादों से सजाकर रखूंगा।
बड़े कहते हैं, बचपन जा रहा है।
तो क्या बचपन सच में चला जाएगा?
चला भी जाए तो क्या?
अगले जन्म में फिर,
जवानी में वापस आएगा।

जिम्मेदार लड़के

किसी से सुना था कि कुत्तों और लड़कों का रोना शुभ नहीं होता है लेकिन समय के अंतराल पर दोनों को थोड़ी-थोड़ी देर के लिए रो लेना चाहिए। कुत्तों को रोने के लिए बस कुछ ही वजह की जरूरत है, जैसे कि ताउम्र वफादारी का पट्टा अपने गले में लगाए हुए जब ये अपने मालिक को ही बेईमान होता हुआ देखते हैं तो अक्सर रो पड़ते हैं। ताउम्र अपने मालिक को अपना भगवान समझने वाले ये कुत्ते जब देखते हैं कि मालिक चंद फायदे के लिए इन्हें भूल चुका है तो ये रो पड़ते हैं। सड़क पर चलती हुए गाड़ी जब इनके किसी अपने को अपनी रफ्तार के आगे कुचल कर आगे बढ़ जाती है तो उसके लाश को देख-देख कर रात भर रो लिया करते हैं।

कुत्तों के पास कुछ खास वजह नहीं होती है रोने के लिए, लड़कों के पास ढेर सारी वजह हैं। समय-समय के अंतराल पर लड़कों को थोड़ी देर के लिए रो लेना चाहिए किसी सुनसान सड़क पर। किसी ऊँची पहाड़ी पर जाओ न ! कोई देख ना रहा हो वहाँ जाकर जोर-जोर से गला फाड़कर उन्हें थोड़ी देर के लिए रो लेना चाहिए। अपनी जिम्मेदारियों को अपने कंधों पर उठाए ऐसे लड़के जब बाजार में निकलते हैं तो उनके पास खोने के लिए सिर्फ उनका आत्मसम्मान होता है। एक ऐसा आत्म-सम्मान जो कभी उनका घमंड था और अब वो घमंड टूट चुका है। धीरे-धीरे जिम्मेदारियों को उठाते-उठाते उन्होंने रिश्तों को तो बहुत पहले ही छोड़ दिया था क्योंकि जिम्मेदारियों का बस्ता इतना भारी होता है कि अक्सर उनकी पीठ झुक जाया करती है। उनके आँखों के नीचे काले धब्बे आ जाते हैं। वे रात में अक्सर अपने मोबाइल पर पुराने मैसेज को देखते हुए किसी नए इंसान को मैसेज भेजने से पहले ही डर जाया करते हैं।

ऐसे लड़के जो जमाने के सामने हमेशा हँसते हुए मिलते हैं और रात के अंधेरे में अपनी 12 मंजिल के मकान के छत पर अक्सर तन्हा बैठा करते हैं, आसमान को निहारते हुए अक्सर सोचा करते हैं कि हम यह बनने तो नहीं आए थे यहाँ। ऐसे लड़के जिनके पास बात करने वाला कोई ना हो, ऐसे लड़के जिनका मोबाइल अक्सर फोन नंबर से भरा रहे लेकिन उनसे बात करने वाला कोई ना हो, पारिवारिक व्हाट्सएप ग्रुप पर उनका हाल-चाल पूछने वाले हजार लोग हैं लेकिन उन्हें कॉल करने वाला कोई ना हो, ऐसे लड़के जो सुबह लैपटॉप का बैग कंधे पर लटकाए ऑफिस के लिए निकल जाया करते हैं, बस इस उम्मीद में कि उन्हें शाम को वापस रूम पर लौटना है और होली दशहरा में अपने घर लौटना है, ऐसे लड़के जिन्होंने जान लिया हो रूम और घर के बीच का अंतर, मैं तो कहता हूँ ऐसे सभी लड़कों को महीने में एक बार मिलना चाहिए, किसी पहाड़ की चोटी पर, या फिर किसी नदी के किनारे, या किसी सुनसान सड़क पर, थोड़ी देर के लिए इन सब को एक साथ वहाँ बैठना चाहिए, ऐसे लड़कों को एक-दूसरे के साथ और फिर एक-दूसरे की तरफ पीठ करके इन्हें रो लेना चाहिए, ताकि ये अपने समाने किसी और को रोता हुआ न देख सकें और ना ही अपने आँसू किसी और को दिखाए। हालाँकि रोना कभी शुभ नहीं होता, लेकिन ऐसे लड़कों को ज़िंदा रहने के लिए थोड़ी देर के लिए एक साथ मिल कर रो लेना चाहिए।



अजित कुमार तिवारी
स.ले.प.अ.

वृद्धाश्रम

जिसके लिए दौड़ते-दौड़ते
थक गया था, गिर गया था
मुरझा गया था
सामने खड़ा था, पर
मदद के लिए नहीं बढ़ा रहा
था, अपना हाथा

मुस्कुरा रहा था
मेरी लाचारी पर,
बेबसी पर
चिढ़ा रहा था, मुझे
अपने कुटिल मुस्कान से
जानते हैं, वो कौन था
कोई दूसरा नहीं
संतानरूपी मेरा ही 'अशक'

वह भी बेबस था,
गलती उसकी नहीं, मेरी थी
मैंने ही उसे बेच दिया था
और वह थाम रहा था,
किसी और का हाथ
छुड़ा नहीं पा रहा था, स्वयं को
माया के उस अप्रतीम रूप से
और मैं इतना थक गया था
कि थाम नहीं पा रहा था
अपनी लाचार पत्नी का हाथा

बहु आधुनिक सहानुभूति
के साथ कह रही थी कि
स्वर्ग जैसा होता है, 'वृद्धाश्रम'
मैं भी सपत्नीक उस स्वर्ग



शंभू शरण भारती
सेवानिवृत्त व.ले.प.अ.

में, जा बसा
बहु के माता-पिता भी वहीं
मिल गये
फिर क्या था, दो से चार भले
चारों मिले एक दूसरे के गले।
जीवन की शाम भी, अजीब होती है
हम तन्हा थे, एक कमरे में
अचानक चिन्तन करने लगा
अन्यथा सारी जिन्दगी बीती चिन्ता में।

जिनकी जन्म, पढ़ाई, नौकरी
शादी सभी थी मेरे लिए प्रासंगिक
आज उसी ने कर दिया था हमें, अप्रासंगिक

बचपन में रह नहीं पाता था
एक पल की दूरी
आज उसी के लिये बन गये थे
हम मजबूरी।

बुढ़ापे से गुजरता, हर किसी का
यही है एक सफर,
और इस हकीकत से
समाज व सरकार दोनों, बेखबरा



आशादीप



आलोक कुमार
स.ले.प.अ.

जीवन के विविध रंगों से,
खुशियों का रंग चुरा लो तुम,
दुखों के बादल घने हो कितने,
आशाओं के दीप जला लो तुम!

घनघोर दुर्गम पथ हो
चाहे जितना भी,
पग पग राह बना लो तुम,
कठोर दुर्जेय चट्टानों के बीच में,
ऊपर उठने की आस जगा लो तुम!

कल-कल बहती नदियों से,
जीवन की सीख बना लो तुम,
बधाएं हो चाहे जैसी भी,
आगे बढ़ने की राह बना लो तुम!
सुनसान निर्जन राहे हो कितनी भी
राहों को मीत बना लो तुम,
मन के विश्वास को बनाए रखकर
अपनी मंजिल को पा लो तुम!

कितनी भी विपरित परिस्थितियाँ हो,
आत्मिक शक्ति बढ़ा लो तुम,
हर क्षण की क्षण-भंगुरता का,
सदा सर्वदा अहसास जगा लो तुम!

जीवन के विविध रंगों में,
खुशियों का रंग चुरा लो तुम
दुखों के बादल घने हो कितने,
आशाओं के दीप जला लो तुम।
आशाओं के दीप जला लो तुम।

ये जिंदगी दुबारा मिले ना मिले



सदानन्द नस्कर
उप महालेखाकार

ये जिंदगी दुबारा मिले ना मिले,
लेकिन हम जरूर मिलेंगे,
ख्यालों में, यादों में, खुशी में, गम में।

कछुआ तीन सौ से अधिक साल जीता है,
लेकिन उसके जीने का मकसद क्या है?

जियें तो जी भर के जिएं,
न जानें जिंदगी दुबारा मिले न मिले।
चलने के रास्तों में कश्मकश भी होगा,
लेकिन उसे नजर अंदाज करें।

हार भी एक तरह की जीत है,
क्योंकि हार ही जीने की प्रेरणा है।

ये मानव जन्म सिर्फ खाने-पीने के लिए नहीं है।
ऐसा कुछ कीजिए कि मरने के बाद भी जिएं।
जियें सब के दिलों में।

ये आसमान को साक्षी मानकर,
ये धरती को माँ सोचकर,
जाति-धर्म, ऊँच-नीच, सब भूलकर
मानवता का धर्म लेकर,
आ लग जा गले-
न जाने, ये जिंदगी दुबारा मिले न मिले।



नीम का पत्ता



अमर आनंद मिश्र
कनिष्ठ अनुवादक

आप सब नीम के विषय में जानते ही होंगे क्या और ज्यादा जानना चाहेंगे? तो लेख 'नीम के संक्षिप्त परिचय' के साथ शुरू करते हैं।

'माधव चिकित्सा' संस्कृत में लिखी गई आयुर्वेदिक ग्रंथों में से एक है जिसकी रचना सातवीं शताब्दी में की गई थी। इस कृति के पहले अध्याय 'ज्वरचिकित्सा' में वर्णित है कि नीम

का उल्लेख सभी प्रमुख बुखारों के उपचार के लिए इस्तेमाल की जाने वाली दवा के रूप में भी किया जाता था। 'माधव चिकित्सा' में संस्कृत भाषा में नीम को अरिष्टः या निम्बः कहा गया है। जिसका अर्थ है, कुछ ऐसा जो परिपूर्ण, अविनाशी और संपूर्ण हो। इसे 'सर्व रोग निवारिणी' भी कहा जाता है। वनस्पति विज्ञान की शब्दावली में, नीम को अज़ादिराच्टा इंडिका (Azadirachta indica) के नाम से जाना जाता है। मूल रूप से यह शब्द फ़ारसी शब्द "आज़ाद दिरकलज़ात-ए-हिंद" से लिया गया है। आज़ाद का अर्थ- "स्वतंत्र", दिरख्त का अर्थ- "वृक्ष" एवं ए-हिंद का अर्थ "भारतीय मूल का" होता है। अतः नीम को 'भारत का मुक्त/स्वतंत्र वृक्ष' कहा जाता है क्योंकि यह बीमारियों और कीटों से मुक्त है और पर्यावरण को नुकसान नहीं पहुँचाता है।

नीम वृक्ष के महत्व को यू. एस. नेशनल एकेडमी ऑफ साइंसेज ने मान्यता दी है, जिसने 1992 में 'नीम- वैश्विक समस्याओं के समाधान के लिए वृक्ष' शीर्षक से एक रिपोर्ट प्रकाशित की थी। इसकी पत्तियाँ ही नहीं बल्कि पेड़ के बीज, जड़ें और छाल में भी महत्वपूर्ण औषधीय गुण होते हैं। हम भारतीय लंबे समय से नीम वृक्ष को महत्व देते आए हैं। सदियों से, लाखों लोग नीम के दातुन से अपने दाँत साफ करते आए हैं, नीम के पत्तों के रस से त्वचा की बीमारियों को ठीक किया है, टॉनिक/काढ़ा के रूप में नीम का जूस पिया है, और कीड़ों को दूर रखने के लिए नीम के पत्तों को अपने बिस्तर, किताबों, चावल के डिब्बों, अलमारी और कोठरियों में रखा है। यह वृक्ष एक अविश्वसनीय पौधा है जिसे संयुक्त राष्ट्र द्वारा "21^{वीं} सदी का वृक्ष" घोषित किया गया है।

ऊपर की पंक्तियाँ पढ़कर जितना अच्छा आपको लगा, जितना अच्छा मुझे लिखकर लगा, उतना ही दुख इस बात है कि

अब नीम का पौधा मेरे घर के आस-पास कुछेक ही बचा है। बाहरी गुण की बात करें, तो कुछ लोगों को फूलों की महक, नीम से ज्यादा अच्छी और ज्यादा मनमोहक लगेगी। यदि कोई चीज हमारे इंद्रियों को अच्छा या बुरा लगता है, या लुभाता या फिर अनाकर्षित करता हो तो हम तुरंत उसके प्रति एक तरफा राय बना लेते हैं। उसके गुण-अवगुण को दरकिनार कर देते हैं। अब इससे संबंधित एक घटना का उदाहरण देता हूँ। घर से कुछ दूर शालीमार बाजार हर मंगलवार व शुक्रवार को लगता है, जहाँ गाँव-देहात से किसान या यूँ कहे कि गाँव वाले साग-सब्जी बेचने आते हैं। उनकी सब्जियाँ टेढ़ी-मेढ़ी आकार वाली होती है, कई में तो मिट्टी भी लगी होती है। एक वाक्य में कहे तो देखने में साफ-सुथरी नहीं होती है। अब सब्जियाँ शॉपिंग मॉल भी मिलती हैं जहाँ माना जाता है कि सब कुछ ताजा मिलता है। वहाँ सब्जियाँ देखने में साफ-सुथरी होती है और टेढ़ी-मेढ़ी नहीं मिलेगी। अब प्रश्न उठता है कि आप कहाँ से सब्जियाँ खरीदेंगे, यदि सब्जियों का मॉल घर से दो कदम दूर हो और बाजार हाट चार या पाँच कि.मी. दूर हो? अब पेट्रोल का खर्च और आराम, सुविधा और न जाने क्या-क्या चीजें याद आने लगेगी। कुछ दिन पहले की ही बात है, शालीमार बाजार की सब्जी मंडी में एक किसान चिरायता बेच रहा था। और इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि चिरायता कोई खरीद ही नहीं रहा था। अधिकांश लोगों को पता हो तब ही तो वे खरीदेंगे न! अब प्रश्न उठता है कि लोगों को इसके विषय में बताने की जिम्मेदारी किसकी है? या स्वयं लोगों की जिम्मेदारी है?

मनोरंजन के लिए बनी आज-कल की फिल्में, वेब सीरीज, रील्स इत्यादि काफी कूल लग सकता है। इसका मतलब यह कतई नहीं है कि मनोरंजन के लिए लोग उपन्यास या कविता पढ़ना छोड़ दिए हैं। आज भी पुस्तकालय के पुस्तक निर्गत पंजी में कबीर, तुलसी, मीरा, निराला, महादेवी वर्मा, प्रेमचंद, और अनेक अन्य रचनाकारों की रचनाओं के पाठकों के नाम दर्ज हैं। इसी प्रकार 'नीम भी किसी से कम नहीं' है। इससे भी प्रेम करने वाले लोग हैं, कम हैं, लेकिन हैं, जिसे आज की पीढ़ी ऑल्ड स्कूल कहती है। लेकिन कहते हैं न 'ओल्ड इज गोल्ड'!

नीम, जिसे हम घरेलू कार्यों में इस्तेमाल करते थे, अब बाजार में बिकने वाली चीज बन गया है। अब इसे लोग दुकान से खरीदने जाते हैं। पहले अगर नीम का कुछ हिस्सा चाहिए जैसे कि पत्ता या उसका फल, और अगर अपने आँगन में पौधा न हो तो लोग



अक्सर आस-पड़ोस से माँग लिया करते थे। अब तो पड़ोसियों ने भी अपने दीवार कॉफी ऊँचे बनाने शुरू कर दिए हैं। 'दीवार' शब्द से टी.एस. एलियट की प्रसिद्ध कविता 'द वेस्ट लैंड' का एक प्रसंग याद आ गया। कविता में लंदन ब्रिज आधुनिक शहर का प्रतीक है, जहाँ लोग बिना किसी उद्देश्य के भीड़ में खोए हुए हैं। यह दृश्य शहरी जीवन की उदासीनता को दिखाता है। लोग एक-दूसरे से जुड़े हुए नहीं हैं, बल्कि अकेले और खोए हुए हैं। लोग जीवित हैं, लेकिन उनकी आत्माएँ मर चुकी हैं। पुराने मूल्य, संस्कृति और मानवीय संबंध टूट रहे हैं। और उनकी जगह एक खाली, मशीन जैसी जीवनशैली ले रही है। भले ही लोग एक साथ हैं, लेकिन वे अकेले हैं। उनके बीच कोई वास्तविक संवाद या संबंध नहीं है।

अभी की बात करें तो इस आधुनिक युग में हर जगह अलग-अलग प्रकार के 'लंडन ब्रिज' बनते जा रहे हैं। कुछ गगनचुंबी इमारत पर रहने वाले लोग तो अपनी मिट्टी को ही भूल गये हैं। कुछ इतना ऊँचा सर उठाकर चलने लगे हैं कि आस-पास के लोग उसे दिख ही नहीं रहे हैं। कुछ तो घंटों रील्स स्कॉल करने में लगे हैं। रील्स में क्या देखा? क्यों देखा? देखना जरूरी था या नहीं? पता नहीं।

मन भी बड़ा अजीब है। लिख क्या रहा था, और लिखते-लिखते कहाँ आ गया मैं। वापस 'दीवार' पर चलते हैं। अगर दीवार ऊँचे है और पड़ोसी से अगर दो-चार दिन नीम का पत्ता माँग लो, तो इसे लेने के बाद नीम अपने गुण से भी ज्यादा कड़वा लगने लगता है। फिर माँगने का मन ही न करे। करें तो फिर क्या करें? नीम का पौधा अभी लगा देता हूँ। लेकिन क्या फायदा, हमारे पास तो समय ही नहीं है, न ही धैर्य है कि हम कम से कम आने वाली पीढ़ी के लिए कुछ अच्छा दे कर जाए। तो चलो फिर बाज़ार! अब सब वहीं मिलेगा। साबुन, शैंपू, फेस-वॉश, क्रीम इत्यादि भी वहीं मिलेगा। हम विज्ञापन की चमक-दमक के कारण वस्तुओं के पीछे भाग रहे हैं, उसके गुणवत्ता के कारण नहीं। लेकिन ऐसा क्यों? ऐसा इसलिए क्योंकि हमें फर्क नहीं पड़ता। हम उपभोगतावाद के गुलाम होते जा रहे हैं।

अगर किसी व्यक्ति से कोई बहुत खुश होगा तो वह उसे क्या देगा? उसे किस समारोह में आने के लिए निमंत्रण देगा? वह शराब की बोतल ऑफर करेगा या किसी बार या भोग-विलास से भरपूर नशे वाली पार्टी में ले जाएगा? या फिर उसे नीम का पौधा देगा? इसमें कोई दो राय नहीं है कि जीवन में मित्रता बहुत महत्व रखता है, लेकिन इसका रूप और उद्देश्य

सबके लिए अलग-अलग होता है। यहाँ "शराब की बोतल" और "नीम का पौधा" दोनों प्रतीकात्मक (मेटाफर) हैं जो मित्रता के दो विपरीत छोरों को दर्शाते हैं: एक ओर क्षण भर का सुख, तो दूसरी ओर स्थायी सत्य।

शराब की बोतल का निमंत्रण, आनंद-आधारित मित्रता को दर्शाता है। यह मित्रता का वह रूप है जहाँ संबंधों का आधार मनोरंजन, सुख, और सामाजिक स्वीकृति होती है। यह मित्रता अस्थायी होती है और परिस्थितियों के साथ बदल सकती है। इसमें गहराई की कमी होती है। यहाँ "देना" सिर्फ भौतिक उपहार या मस्ती तक ही सीमित होता है। ऐसे मित्र अक्सर सुख-दुख के सच्चे साथी नहीं होते। जैसे ही आनंद का स्रोत समाप्त होता है, मित्रता भी धुंधली पड़ जाती है।

दूसरी ओर, नीम का पौधा, सत्य के साथ मित्रता या कहे चरित्र-आधारित मित्रता का प्रतीक है। यह मित्रता सच्चाई, स्वयं के विकास, और बिना स्वार्थ सहयोग करने पर टिकी होती है। यह मित्रता समय और संघर्ष की कसौटी पर खरी उतरती है। इसमें 'देना' सिर्फ भौतिक नहीं, बल्कि ज्ञान, सच्चाई और आंतरिक बदलाव भी होता है। अरस्तू इसे "सबसे उच्च" मित्रता मानते हैं, जो व्यक्ति के गुणों और चरित्र पर आधारित होती है। नीम की तरह, इस मित्रता का स्वाद प्रारंभ में कड़वा लग सकता है। ऐसे मित्र अक्सर अग्निपरीक्षा से गुजरते हैं, क्योंकि वे भेड़-चाल में शामिल नहीं होते हैं, अज्ञानियों की आँखों में चुभते हैं, लेकिन सच्चे होते हैं। जो मित्र हमारी गलतियाँ बताता है या हमें आत्ममंथन या आत्मचिंतन के लिए प्रेरित करता है, वह नीम का पौधा देने वाला है। उसका उपहार "आँखें खोलना" है, न कि सतही खुशी देना।

आज की भागदौड़ भरी जिंदगी में लोगों के पास चरित्र-आधारित मित्रता निभाने का समय नहीं है। "फ्रेंड लिस्ट" बढ़ गई है, लेकिन "दोस्ती" सतही हो गई है। नेटवर्किंग और लाभ के लिए संबंध बनाना आम हो गया है। मित्रता तभी सफल होती है जब उसके आधार की साझा समझ हो। उपयोगिता या आनंद-आधारित मित्रता भी लाभदायक हो सकती है, शर्तें बस यही हैं कि दोनों पक्ष उसकी सीमाएँ समझें।

सच्ची मित्रता का सूत्र यही है कि आँखें खुल जाएँ। इसलिए, जो आपको नीम का पौधा दे, उसे संजोएँ। वही आपको "निराकार सत्य" तक ले जाएगा।

प्रदूषण एवं संरक्षण



राजेश साह
वरिष्ठ लेखापरीक्षक

आजकल दुनिया के सामने अनेक समस्याएँ उत्पन्न हो गई हैं। इनमें प्रदूषण की समस्या ने सबसे बड़ी और भयंकर रूप धारण कर लिया है। पुराने जमाने में प्रदूषण जैसी कोई बात ही नहीं थी। लगभग सभी जगह हरियाली से प्रकृति में एक संतुलन बना हुआ था। पहले वायु तथा जल शुद्ध थे। धरती हरी-भरी और उपजाऊ थी। प्रकृति स्वभाव से ही मनुष्य की स्थिति अच्छी रही थी। विज्ञान की शक्ति पाकर मनुष्य ने प्रकृति पर विजय पाने का अभियान आरंभ किया है, जिससे आज प्रदूषण सभी जगह समान रूप से मौजूद है। जंगल, नदी, सागर-महासागर सभी इसकी चपेट में आ गए हैं। महानगरों में तो यह समस्या दिन-प्रतिदिन भयंकर रूप धारण करती जा रही है। प्रदूषण के बढ़ने के अनेक कारण हैं, परंतु सर्वप्रमुख कारण है वनों का कटाव। बढ़ती हुई आबादी के दबाव के कारण वनों को लगातार काटा जा रहा है, जिससे वातावरण खराब हो गया है और शुद्ध हवा का मिलना कठिन हो गया है तथा ऋतुचक्र में भी परिवर्तन हो गया है। इस प्रकार, वनों का कटाव तथा नए वनों का न लगाना तो प्रदूषण का कारण है ही, इसके अतिरिक्त आज के नगरों में कल-कारखानों का जाल-सा बिछता जा रहा है। अनेक छोटे-बड़े उद्योग-धंधे, बहुत-तरह की गैस और कचरा छोड़ने वाली फैक्ट्रियों का विस्तार हो रहा है। इन सबसे वायु-प्रदूषण बढ़ रहा है। यातायात के आधुनिक साधन भी प्रदूषण बढ़ाने के लिए कम जिम्मेदार नहीं हैं। वाहनों के तेज बजनेवाले हॉर्न तथा ध्वनि-प्रसारण यंत्रों के रात-दिन प्रयोग से ध्वनि-प्रदूषण बढ़ रहा है। कारखानों से निकलने वाला गंदा कचरा, नगरों का गंदा पानी तथा कूड़ा-कचरा नदियों तथा सागरों में बहा दिया जाता है, जिससे जल-प्रदूषण बढ़ गया है। आज धरती भी प्रदूषण से अछूती नहीं रही है। अधिक उपज के लालच में धरती में रासायनिक खाद का ज्यादा उपयोग किया जा रहा है, जिससे धरती की स्वाभाविक उपजाऊ शक्ति समाप्त हो गई है।

जल-प्रदूषण रोकने के लिए कारखानों के मल और रासायनिक पानी तथा शहरों के गंदे पानी को साफ करके ही नदियों में डाला जाए। ध्वनि-प्रदूषण रोकने के लिए तेज हॉर्न तथा लाउड-स्पीकरों पर रोक लगाई जाए। शहरों में कूड़े-कचरे के ढेर आदि का खाद के रूप में उपयोग करने के वैज्ञानिक उपाय खोजना आवश्यक हैं। लोगों को इस प्रकार शिक्षित किया जाए कि वे अपने घरों में रेडियो, टी.वी. आदि

अधिक तेज़ आवाज में न चलाएँ। कचरे को नदियों, सागरों में न डालकर इन्हें नष्ट करने के वैज्ञानिक उपाय खोजे जाएँ। पेट्रोल, डीज़ल आदि से चलने वाले वाहनों पर प्रदूषण नियंत्रण नियम लागू किए जाएँ। इन कुछ उपायों के द्वारा प्रदूषण से कुछ बचाव हो सकता है तथा मानव-स्वास्थ्य की रक्षा की जा सकती है, अन्यथा प्रदूषण विनाश से नहीं बचा जा सकेगा। हम प्रकृति का संतुलन बनाए रखें। ताकि धरती स्वर्ग सी लगने लगे।

पर्यावरण संरक्षण से तात्पर्य पर्यावरण की सुरक्षा करना है। वृक्ष-वनस्पतियों का मानव जीवन में अत्यधिक महत्व है। वे मनुष्य के लिए अत्यंत उपयोगी हैं। वे मानव जीवन का आधार हैं, परंतु आज मानव ने इसके महत्व व उपयोग को न समझ कर इनकी उपेक्षा कर रहा है। गौण लाभों को महत्व देते हुए इनका लगातार दोहन करता चला जा रहा है। जितने वृक्ष कटते हैं, उतने लगने भी चाहिए, परंतु ऐसा नहीं हो रहा है और इनकी संख्या लगातार घटती जा रही है। परिणामतः अनेक समस्याएँ मनुष्य के सामने प्रकट हो रही हैं।

पर्यावरण संरक्षण क्यों आवश्यक है?

प्राणी अपने जीवन हेतु वनस्पति जगत पर आश्रित हैं। मनुष्य हवा में उपस्थित ऑक्सीजन को श्वास द्वारा ग्रहण करके जीवित रहता है। पेड़-पौधे ही प्रकाश-संश्लेषण की क्रिया में ऑक्सीजन छोड़ते हैं। इस तरह मनुष्य के जीवन का आधार पेड़-पौधे ही उसे प्रदान करते हैं। इसके अतिरिक्त प्राणियों का आहार वनस्पति है। वनस्पति ही प्राणियों को पोषण प्रदान करती है। इसलिए पर्यावरण संरक्षण बहुत जरूरी है।

कल-कारखानों की वृद्धि को विकास का आधार माना जाता रहा है। खाद्य उत्पादन के लिए कृषि तथा सिंचाई पर जोर दिया जाता रहा है। परंतु वन-संपदा की महत्ता समझने की ओर जितना ध्यान देना आवश्यक था, उतना दिया ही नहीं गया। वनों को जमीन घेरने वाला माना जाता रहा है और उन्हें काटकर कृषि करने की बात सोची जाती रही है। जलाऊ लकड़ी तथा इमारती लकड़ी की आवश्यकता के लिए भी वृक्षों को अंधाधुंध काटा जाता रहा है और उनके स्थान पर नए वृक्ष लगाने की कोशिश नहीं की जाती है। इसलिए आज हम वन संपदा की दृष्टि से निर्धन होते चले जा रहे हैं और उसके दुष्परिणामों को प्रत्यक्ष हानि के रूप में सामने देखे जा रहे हैं।

पर्यावरण संरक्षण समय की जरूरत है।

वृक्ष-वनस्पति से धरती हरी-भरी बनी रहे तो उससे मनुष्य को अनेक प्रकार के लाभ होते हैं। ईंधन व इमारती लकड़ी से लेकर फल-फूल, औषधियाँ प्रदान करने, वायुशोधन, वर्षा का संतुलन, पत्तों से



मिलने वाली खाद, धरती के कटाव का बचाव, बाढ़ रोकने, कीड़े खाकर फसल की रक्षा करने वाले पक्षियों को आश्रय आदि अनगिनत लाभ हैं। स्कॉटलैंड के वनस्पति वैज्ञानिक राबर्ट चेम्बर्स ने लिखा है- वन नष्ट होंगे तो पानी का अकाल पड़ेगा, भूमि की उर्वरा शक्ति घटेगी और फसलों की पैदावार कम होती जाएगी, पशु नष्ट होंगे, पक्षी घटेंगे। वन-विनाश का अभिशाप जिन पाँच प्रेतों की भयंकर विभीषिका बनाकर खड़ा कर देगा वे हैं- बाढ़, सूखा, गर्मी, अकाल और बीमारी। हम जाने-अनजाने में वन संपदा नष्ट करते हैं और उससे जो पाते हैं, उसकी तुलना में कहीं अधिक गंवाते हैं।

वायुमंडल में वायु प्रदूषण आज समूचे संसार के लिए एक बहुत ही विकट समस्या है। शुद्ध वायु का तो जैसे अभाव सा हो गया है। शुद्ध वायु ही प्राणों का आधार है। इसके अभाव में अन्यान्य विषैली गैसों का अनुपात बढ़ता जाता है और प्राणीजगत के लिए विपत्ति का कारण बनता है। अनुसंधान वैज्ञानिक का मत है कि पृथ्वी के वायुमंडल में प्राण वायु कम होती जा रही है और दूसरे तत्व बढ़ते जा रहे हैं। यदि वृक्ष-संपदा को नष्ट करने की यही गति रही तो वातावरण में दूषित गैसों इतनी अधिक हो जाएंगी कि पृथ्वी पर जीवन जीना दूभर हो जाएगा। इस विषम स्थिति का एकमात्र समाधान हरीतिमा संवर्धन है। विशेषज्ञों का कहना है कि यदि हरीतिमा संवर्धन नहीं किया गया तो ग्लोबल वार्मिंग जैसी समस्याएँ विकराल रूप ले लेंगी।

पहले के समय में ऋषि-मुनि अपने आश्रम के पास वन लगाते थे। उन्हें पर्यावरण संरक्षण के विषय में जरूर पता रहा होगा। वे वृक्ष-वनस्पतियों को प्राणीजगत का जीवन मानते थे और उन्हें बढ़ाने को सर्वोपरि प्रमुखता देते थे। वृक्षों की कमी देखकर ऋषि लोग नाराज हो उठते थे और धरती से पूछते थे-

“पत्तों के समान ही जिनमें पुष्प होते थे और पुष्पों के समान ही जिनमें प्रचुर फल लगते थे और फल से लदे होने पर भी जो सरलता से चढ़ने योग्य होते थे, हे माता पृथ्वी! बता वे वृक्ष अब कहाँ गए?”

ग्रंथों में भी तुलसी, वट, पीपल, आँवला आदि वृक्षों को देव संज्ञा में गिना गया है। वृक्ष मनुष्य परिवार के ही अंग हैं, वे हमें प्राणवायु प्रदान करके जीवित रखते हैं। वे हमारे लिए इतने अधिक उपयोगी हैं जिसका मूल्यांकन करना कठिन है। अतएव हमें अधिक से अधिक वृक्ष लगाने का प्रयत्न करना चाहिए। आज सभी लोगों का यह प्रयास होना चाहिए कि पर्यावरण संरक्षण को लेकर जागरूकता फैलाएँ।

हम छोटे-छोटे कदम उठाकर, जैसे कम पानी और बिजली का इस्तेमाल करना, कचरे को कम करना और उसका पुनर्चक्रण करना, पौधे लगाना, वाहनों का कम इस्तेमाल करना आदि, पर्यावरण को स्वच्छ और सुरक्षित रखने में योगदान दे सकते हैं। यह पृथ्वी हमारा एकमात्र आवास है और आने वाली पीढ़ियों के लिए इसे बचाना हमारा

सामूहिक दायित्व है। इतिहास के पन्नों को पलटने पर पता चलता है कि हमारे पूर्वज पर्यावरण संरक्षण को लेकर हमसे कहीं ज्यादा चिंतित थे। इसके लिए हम सुंदरलाल बहुगुणा को मिसाल के तौर पर देख सकते हैं, जिन्होंने वन्य संसाधनों के सुरक्षा के लिए चिपको आंदोलन की शुरुआत की थी। ठीक इसी प्रकार, मेधा पाटेकर ने जनजातीय लोगों के लिए पर्यावरण सुरक्षा के प्रभावी प्रयास किए थे, जो कि नर्मदा नदी पर बन रहे बांध से बहुत तरह से प्रभावित हुए थे। आज के समय में एक युवा के रूप में यह हमारा दायित्व है कि पर्यावरण सुरक्षा के लिए हम भी इसी तरह के प्रयास करें। कुछ छोटे-छोटे उपायों द्वारा हम प्रकृति को बचाने में अपना सहयोग दे सकते हैं:

- हमें उचित रूप के धारणा को बढ़ावा देना चाहिए, जिसके अंतर्गत रेड्यूस, रीसायकल रीयूज जैसे कार्य आते हैं। जिसमें हम गैर नवीकरणीय ऊर्जा के स्रोतों के अधिक उपयोग को कम करके जैसे कि लोहा बनाने के लिए लोहे के कचरे का इस्तेमाल करना जैसे उपाय कर सकते हैं।
- ऊर्जा बचाने वाले ट्यूब लाइट और बल्ब आदि उत्पादों का उपयोग करना।
- प्लास्टिक बैग के जगह जूट या कपड़े के बैग का इस्तेमाल करना।
- पेपर और लकड़ी का कम उपयोग करना। जितना ज्यादा हो सके ई-बुक और ई-पेपर का इस्तेमाल करना।
- रासायनिक उर्वरकों का उपयोग कम करना और गोबर से खाद बनाने के लिए कम्पोस्ट बिन की स्थापना करना।
- जीवाश्म ईंधन का उपयोग कम से कम करना, कहीं आने-जाने के लिए पैदल, कार पूल या सार्वजनिक परिवहन जैसे उपायों का उपयोग करना।
- पुनः उपयोग की जा सकने वाली बैटरियों और सोलर पैनलों का उपयोग करना।

हम तो यह भी जानते हैं कि, वैसे तो सरकार ने प्रकृति और वन्यजीव के सुरक्षा के लिए कई सारे कानून और योजनाएँ स्थापित की गई हैं। फिर भी व्यक्तिगत रूप से यह हमारा कर्तव्य है कि हरेक व्यक्ति पर्यावरण संरक्षण में अपना योगदान दे और अपनी आने वाली पीढ़ियों के भविष्य को सुरक्षित करें, क्योंकि वर्तमान में हमारे द्वारा ही इसका सबसे ज्यादा उपयोग किया जा रहा है। इसे लेस्टर ब्राउन के शब्दों में बहुत ही आसानी से समझा जा सकता है, “हमने इस पृथ्वी को अपने पूर्वजों से प्राप्त नहीं किया है, बल्कि अपने आने वाली पीढ़ियों से छीन लिया है।” इसलिए हमलोगों को इस तथ्य पर ज्यादा ध्यान देना चाहिए।

अनुवादवाला

“Writers make national literature, while translators make universal literature.”

“लेखक राष्ट्रीय साहित्य लिखता है और अनुवादक वैश्विक”

– José Saramago

20वीं सदी शायद अनुवाद की सदी है। आज समाज के वैश्विक रूप को सभी ने स्वीकारा है और जिन्होंने नहीं स्वीकारा वे पीछे रह गए हैं। आप सोचिए कि भारत की छाती से निकला बौद्ध धर्म क्या अनुवाद के बिना भारत के अलावा अन्य देशों में अपने धर्म के ज्ञान के सैलाब से जनमानस को पाट पाता। क्या ऐसा संभव होता?, हरगिज नहीं। बहुभाषा का विकल्प तो खुला है परंतु यह सभी के लिए इतना आसान नहीं है। ऐसे में एक ही रास्ता बचता है वो है अनुवाद का रास्ता।

“Without translation, we would be living in provinces bordering on silence.”

“अनुवाद के बिना, हम ऐसे प्रांतों में रह रहे होंगे जहां सम्राट पसरा हुआ है।”

– George Steiner

वैसे तो अनुवाद एक प्राचीन कला है परंतु कुछ पुराने समय में अनुवादकों को समाज में और विशेषकर पेशेवर समाज में उचित स्थान प्राप्त नहीं था। जो दर्जा उन्हें समाज के संभ्रांत वर्ग द्वारा मिलना चाहिए था, वह हासिल नहीं था। उन्हें दोयम दर्जे का माना जाता था। आप यूँ सोचें कि अनुवाद करना कुछ नहीं करने के बराबर ही था। समय बदला, परिस्थितियाँ बदली और वर्तमान परिवेश में अनुवादकों को एक उचित स्थान प्राप्त हुआ है। अब अनुवाद एक संगठित क्षेत्र का कार्य बन चुका है।

“Translation is an act of re creation.”

“अनुवाद पुनःसृजन है”

– Ken Liu

जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में हमें अनुवाद की आवश्यकता महसूस होती है। आज भारत में ही आप देखें बड़ी से बड़ी कंपनियाँ, टीवी धारावाहिक, फिल्में विभिन्न भाषाओं में जनता के हिसाब से परोसी जाती हैं। जिनसे उनका व्यापार तो बढ़ता ही है साथ-साथ भाषाओं की सीमा भी बढ़ती है। दर्शक अगर दक्षिण में हैं तो उत्तर के फिल्मों, धारावाहिकों का भी आनंद उठा सकते हैं और उत्तर में हैं तो दक्षिण के सभी फिल्मों, धारावाहिकों का लुत्फ उठा सकते हैं। यह कैसे संभव हुआ। कोई अनुवादक तो है जो इस जोखिम भरे कार्य को अंजाम दे रहा है। जी हाँ जोखिम भरा कार्य। अनुवाद एक जोखिम भरा कार्य ही है। अनुवाद को

‘आवश्यक परंतु नामुमकिन’ भी कहा जाता है। क्योंकि अनुवाद हू-ब-हू नहीं हो सकता। उसमें थोड़ा बहुत हास होता ही है और होगा ही। ‘आहें भरना’ का भाव अंग्रेजी के ‘Sigh’ से नहीं आ सकता। हिंदी के गानों में ‘अंगड़ाई’ और ‘करवटे बदलते रहें’ हमने सुना है, आप बताएं कि अंग्रेजी में ‘अंगड़ाई’ और ‘करवट’ के लिए कौन सा शब्द इस्तेमाल करेंगे। अगर कहीं से कुछ कर भी लेते हैं तो एक पाठक जो ‘करवटें बदलते रहे’ गीत सुन चुका है क्या वह उससे उस अनुवाद में छिपे भाव से अपने आप को जोड़ पाएगा, नहीं। फिर वह कहेगा- “अनुवाद में कुछ मजा नहीं आया।” वास्तव में अनुवाद मजे की चीज है भी नहीं। अनुवाद से हमें ज्यादा उम्मीदें भी नहीं करनी चाहिए। क्योंकि भाव का क्षय हो जाएगा, मूलता नहीं रहेगी, वह स्वदेशीपन नहीं रहेगा, द्रव्यता नहीं रहेगी और सबसे ऊपर की वो रस नहीं रहेगा। जब रस नहीं रहेगा तो स्वाद कहाँ।

इन सब से परे अनुवाद आवश्यक तो है। कम से कम हम अन्य भाषाओं में रचित सुंदर अभिव्यक्तियों की सुगंध तो ले पाते हैं। उनके मूल विचारों के ज्ञान से अवगत तो हो पाते हैं। सभ्यताओं, संस्कृतियों का आदान-प्रदान तो होता ही है। एक वैश्विक माहौल तो बनता ही है। मानव कृत सुंदर रचनाओं को जानने का हक सब का है। अनुवादक ही इस हक के अधिकार को दिलाता है। अनुवाद मूल रूप से जिज्ञासाओं को तृप्त करता है।

“Through the act of translation we break out of linguistic confinement and reach many other communities.”

“अनुवाद के माध्यम से हम भाषाई बंधनों से बाहर निकलते हैं और कई अन्य समुदायों तक पहुंचते हैं।”

– Ngugi wa Thiong'o

अनुवाद ने रचा इतिहास: किसी भी भारतीय भाषा में लिखी गई पहली पुस्तक जिसने वर्ष 2022 में अंतर्राष्ट्रीय बुकर पुरस्कार का खिताब अपने नाम किया है उस पुस्तक का नाम है ‘टुंब ऑफ सैंड’ (रेत समाधि)। इसका अंग्रेजी अनुवाद विख्यात अनुवादक डेजी रॉकवेल ने किया है।

अमेरिकी मूल की डेजी रॉकवेल हिंदी और उर्दू भाषा की अनुवादक हैं। इन्होंने अनेकों साहित्य का अनुवाद किया है। जिसमें उपेन्द्र नाथ अशक की ‘गिरती दीवारें’, भीष्म साहनी की कालजयी ‘तमस’, खदीजा



शैलेन्द्र कुमार
सहायक निदेशक
(राजभाषा)



मस्तूर की 'आँगन' शामिल है। वर्ष 2021 में हिंदी लेखिका गीतांजलि श्री की 'रेत समाधि' का अनुवाद भी डेजी रॉकवेल द्वारा किया गया है। उनकी इस अनुवाद ने इंटरनेशनल बुकर पुरस्कार को अपना बना लिया है।

रॉकवेल हिंदी, लैटिन, फ्रेंच, जर्मन तथा प्राचीन ग्रीक की छात्रा रही हैं। इन्होंने दक्षिण एशियाई साहित्य में शिकागो विश्वविद्यालय से पीएचडी की उपाधि प्राप्त की है। शिकागो विश्वविद्यालय से ही उन्होंने हिंदी साहित्य, अनुवाद तथा समाज विज्ञान की पढ़ाई की है। हिंदी लेखक उपेन्द्रनाथ अशक के कार्यों पर पीएचडी डिसेटेशन लिखने हेतु इन्हें अनुदान भी दिया गया।

डेजी रॉकवेल द्वारा हिंदी तथा उर्दू से अनुदित अनेको अनुवाद हैं-

- » हैट्स एंड डॉक्टर्स (2013) (उपेन्द्र अशक)
- » फॉलिंग वॉल्स (2015)
- » तमस (2016) (भीष्म साहनी)
- » द वीमेंस कोर्टयार्ड (2018) (खदीजा मस्तूर)
- » ए गुजरात हियर, ए गुजरात देयर (2019) (कृष्णा सोबती)
- » टुंब ऑफ सैंड (2021) (गीतांजलि श्री)

"Translation is at best an echo."

"अनुवाद सर्वोत्तम रूप से प्रतिध्वनि है।"

— George Borrow

डेजी रॉकवेल सिर्फ अनुवादक ही नहीं हैं। बल्कि वो लंबे समय तक बर्कले यूनिवर्सिटी में हिंदी पढ़ा चुकी हैं और पंद्रह साल की लंबी नौकरी के बाद उन्होंने तय किया कि अब वो पूरा समय अनुवाद और पेंटिंग को देंगी। डेजी रॉकवेल एक बेहतरीन पेंटर भी हैं और ये कला उन्हें विरासत में मिली है।

संभवतः डेजी इन सबसे दूर भागते हुए अकादमिक दुनिया में गईं और लंबे समय तक कला को छोड़ा मगर कला ने उन्हें नहीं छोड़ा और आज पूरी साहित्यिक दुनिया उन्हें जानती है; एक अनुवादक के रूप में; एक कलाकार के रूप में।

फ्रैंक वाएन जो खुद एक अनुवादक हैं, निर्णायक मंडल के अध्यक्ष थे, जिसने यह रचना चुनी। वाएन ने कहा कि निर्णायकों ने एक जोश भरी बहस के बाद पूरे उत्साह के साथ 'टुंब ऑफ सैंड' को पुरस्कार के लिए चुना। वाएन ने यह भी कहा कि भले ही इस किताब में बेहद दर्दनाक अनुभवों का वर्णन है, लेकिन "यह अद्भुत रूप से प्रफुल्लित कर देने वाली किताब है।" वो आगे कहते हैं, "यह किताब मातम, खोने और मृत्यु जैसे बेहद गंभीर मुद्दों को उठाती है और आवाजों के शोर को एक समूहगान में तब्दील कर देती है।"

गीतांजलि श्री कहती हैं, "मैंने कभी बुकर पुरस्कार जीतने की कल्पना भी नहीं की थी। कभी सोचा ही नहीं कि मैं ऐसा भी कुछ कर सकती हूँ। यह एक बड़ा सम्मान है। मैं हैरान, प्रसन्न, सम्मानित और विनम्र महसूस कर रही हूँ।"

उन्होंने कहा, "मैं और यह किताब दक्षिण एशियाई भाषाओं में एक समृद्ध साहित्यिक परंपरा से जुड़े हैं। विश्व साहित्य इन भाषाओं के कुछ अद्भुत लेखकों को जानकर और समृद्ध होगा।"

अनुवाद की दुनिया में बुकर

अंतर्राष्ट्रीय बुकर पुरस्कार हर साल ऐसी किताबों को दिया जाता है जो किसी अन्य भाषा से अनुवादित हैं और युनाइटेड किंगडम या आयरलैंड में प्रकाशित हुई हो। इस पुरस्कार की स्थापना उन अनुवादकों के काम को सम्मानित करने के लिए की गई थी जो विभिन्न भाषाओं के साहित्य को अंग्रेजी में उपलब्ध करवाते हैं। वाएन ने कहा कि यह पुरस्कार देने का मकसद यह साबित करना भी है कि "अनुवाद में उपलब्ध साहित्य किसी मछली के तेल जैसी चीज नहीं है जो आपके लिए अच्छा होना चाहिए।"

बीसवीं सदी को अनुवाद का युग कहा गया है। यद्यपि अनुवाद सबसे प्राचीन व्यवसाय या व्यवसायों में से एक कहलाता है तथापि ऐसा माना जाता है कि उसे जो महत्व बीसवीं सदी में प्राप्त हुआ वह उससे पहले उसे नहीं मिला। वर्तमान युग में अधिकतर राष्ट्रों में यदि एक भाषा प्रधान है तो एक या अधिक भाषाएँ गौण पद पर दिखाई देती हैं। दूसरे शब्दों में, एक ही राजनीतिक-प्रशासनिक इकाई की सीमा के अन्तर्गत भाषायी बहुसंख्यक भी रहते हैं और भाषायी अल्पसंख्यक भी। लोकतन्त्र में सब लोगों का प्रशासन में समान रूप से भाग लेने का अधिकार तभी सार्थक माना जाता है, जब उनके साथ उनकी भाषा के माध्यम से सम्पर्क किया जाए। इससे बहुभाषिकता की स्थिति उत्पन्न होती है और उसके संरक्षण की प्रक्रिया में अनुवाद कार्य का आश्रय लेना अनिवार्य हो जाता है।

इसके अतिरिक्त अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न राष्ट्रों के बीच राजनीतिक, आर्थिक, वैज्ञानिक और प्रौद्योगिक तथा साहित्यिक और सांस्कृतिक स्तर पर बढ़ते हुए आदान-प्रदान के कारण अनुवाद कार्य की अनिवार्यता और महत्ता की नई चेतना प्रबल रूप से विकसित होती हुई दिखती है। उत्तर-आधुनिक युग में अनुवाद की महत्ता व उपादेयता को विश्वभर में स्वीकारा जा चुका है। वैदिक युग के 'पुनः कथन' से लेकर आज के 'ट्रांसलेशन' तक आते-आते अनुवाद अपने स्वरूप और अर्थ में बदलाव लाने के साथ-साथ अपने बहुमुखी व बहुआयामी प्रयोजन को सिद्ध कर चुका है। प्राचीन काल में 'स्वातः सुखाय' माना जाने वाला अनुवाद कर्म आज संगठित व्यवसाय का मुख्य आधार बन गया है। आज विश्वभर में अनुवाद की आवश्यकता जीवन के हर क्षेत्र में किसी-

न-किसी रूप में अवश्य महसूस की जा रही है और इस तरह अनुवाद आज के जीवन की अनिवार्य आवश्यकता बन गया है।

बीसवीं शताब्दी के अवसान और इक्कीसवीं सदी के स्वागत के बीच आज जीवन का कोई भी ऐसा क्षेत्र नहीं है जहाँ पर हम चिन्तन और व्यवहार के स्तर पर अनुवाद के आग्रही न हों। अनुवाद के महत्त्व को निम्नलिखित बिंदुओं द्वारा स्पष्ट किया जा रहा है।

विश्व की सभ्यताओं और संस्कृतियों के विकास में अनुवाद की विशेष भूमिका रही है। यूनान मिश्र चीन आदि की प्राचीन सभ्यताओं से भारत का घनिष्ठ संबंध रहा है और इस संबंध में अनुवाद की विशेष महत्ता रही है। बौद्ध धर्म का प्रचार प्रसार समूचे एशिया में अनुवाद की जीवंत परंपरा का परिणाम है। विश्व भर में गीता तथा उपनिषद के ज्ञान का अनुवाद अपने ढंग से किया जाता रहा है। पंचतंत्र के लघु संग्रहों का अनुवाद अरबी तथा अन्य यूरोपीय भाषाओं में हुआ है। वास्तव में अनुवाद एक सांस्कृतिक सेतु का काम करता है। विश्व की विभिन्न संस्कृतियों को जानने व समझने में इसकी निश्चित रूप से भूमिका सिद्ध हो। विश्व की सांस्कृतिक एकता में इसका महत्वपूर्ण योगदान है। आज की भारतीय संस्कृति जिसे हम सामासिक संस्कृति कहते हैं उसके निर्माण में हजारों वर्षों के विभिन्न धर्मों, मतों एवं विश्वासों की साधना छिपी हुई है। इन सभी मतों एवं विश्वासों को आत्मसात कर जिस भारतीय संस्कृति का निर्माण हुआ है उसके पीछे अनुवाद की महत्वपूर्ण भूमिका असंदिग्ध है। अनुवाद एक ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा विभिन्न राष्ट्रों की सांस्कृतिक निधियां आज हमारे सामने हैं। अनुवाद के माध्यम से ही हम एक दूसरे की सांस्कृतिक विरासत के भागीदार बनें हैं।

साहित्य के अनुवाद का इतिहास काफी प्राचीन है। अनुवाद ने न केवल विभिन्न साहित्य के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है बल्कि भाषा के विकास में भी इसके योगदान को नकारा नहीं जा सकता। विश्व के विभिन्न साहित्य के बीच जो परस्पर आदान-प्रदान हुआ वह अधिकांशतः अनुवाद के माध्यम से ही हुआ है। इसके माध्यम से अन्य भाषाओं के साहित्य का अध्ययन करने से जिन नई अभिव्यक्तियों, संवेदनाओं, विचारधाराओं, जीवन अनुभूतियों और साहित्य शैलियों का परिचय मिलता है वह हमारे जीवन के साथ-साथ हमारी चिंतन शक्ति और साहित्य सृजना को भी प्रभावित करता है। विभिन्न भाषाओं के साहित्य के तुलनात्मक अध्ययन में भी अनुवाद से काफी सहायता मिली है। ज्ञान विज्ञान के क्षेत्र में, साहित्य के अध्ययन में अनुवाद का महत्त्व आज व्यापक हो गया है। साहित्य यदि जीवन और समाज के यथार्थ को प्रस्तुत करता है तो विभिन्न भाषाओं के साहित्य के सामूहिक अध्ययन से किसी भी समाज, देश या विश्व की चिन्तन-धारा एवं संस्कृति की जानकारी मिलती है।

अन्तर्राष्ट्रीय साहित्य के अनुवाद से ही यह तथ्य प्रकाश में आया कि दुनिया के विभिन्न भाषाओं में लिखे गए साहित्य में ज्ञान का विपुल भण्डार छिपा हुआ है। भारत में अन्तर्राष्ट्रीय साहित्य का अनुवाद तो भारत में सूफियों के दार्शनिक सिद्धान्तों के प्रचलन के साथ ही शुरू हो गया था; किन्तु इसे व्यवस्थित स्वरूप आधुनिक युग में ही प्राप्त हुआ। शेक्सपियर तथा डी.एच. लॉरेंस जैसे चिन्तकों की रचनाओं के अनुवाद से भारतीय जनमानस का साक्षात्कार हुआ एवं कालिदास, रवीन्द्रनाथ टैगोर एवं प्रेमचन्द की रचनाओं से विश्व प्रभावित भी हुआ। यही अनुवाद की खूबसूरती है।

दुनिया के विभिन्न भाषाओं के अनुवाद द्वारा ही तुलनात्मक साहित्य के अध्ययन में सहायता मिलती है। तुलनात्मक साहित्य द्वारा इस बात का पता लगाया जाता है कि देश, काल और समय की भिन्नता के बावजूद विभिन्न भाषाओं के रचनाकारों के साहित्य में साम्य और वैषम्य क्यों है? अनुवाद के द्वारा ही जो तुलनीय है वह तुलनात्मक अध्ययन का विषय बनता है। प्रेमचन्द और गोर्की, निराला और इलियट तथा राजकमल चौधरी एवं मोपासाँ के साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन अनुवाद के फलस्वरूप ही सम्भव हो सका।

संवाद का महत्वपूर्ण योगदान ज्ञान विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में मिलता है। अनुवाद से मिलने वाले ज्ञान ने मनुष्य के समाजशास्त्र को एक देश की सीमा से निकाल कर दूसरे देश तक पहुंचाया है। संस्कृत और यूनानी साहित्य कला और दर्शन के प्रचार-प्रसार का श्रेय अनुवाद को ही जाता है। आधुनिक नवजागरण काल में पश्चिम के नए ज्ञान विज्ञान से हमारे ज्ञान और चेतना के विकास में अनुवाद ही सबसे बड़ा सहारा बना है। विश्व के सभी विकसित देशों की राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, वैज्ञानिक तथा प्रौद्योगिकीपरक विकास में अनुवाद की उल्लेखनीय भूमिका रही है। आज विज्ञान के तेजी से बदलते हुए विश्व में प्रौद्योगिकी चिकित्सा कृषि आदि के क्षेत्र में हो रहे नए नए आविष्कारों और अनुसंधानों से जुड़े रहने के लिए अनुवाद सबसे बड़ा साधन है।

वर्तमान युग में अनुवाद ज्ञान की ऐसी शाखा के रूप में विकसित हुआ है जहाँ इज्जत, शोहरत एवं पैसा तीनों हैं। आज अनुवादक दूसरे दर्जे का साहित्यकार नहीं बल्कि उसकी अपनी मौलिक पहचान है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में तेजी से हुए विकास के साथ भारतीय परिदृश्य में कृषि, उद्योग, चिकित्सा, अभियान्त्रिकी और व्यापार के क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुआ है। इन क्षेत्रों में प्रयुक्त तकनीकी शब्दावली का भारतीयकरण कर इन्हें लोकोन्मुख करने में अनुवाद की महत्वपूर्ण भूमिका है। बीसवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध रोजगार के क्षेत्र में अनुवाद को महत्वपूर्ण पद पर आसीन करता है। संविधान में हिन्दी को राजभाषा का दर्जा दिए जाने के पश्चात् केन्द्र सरकार के कार्यालयों, सार्वजनिक



उपक्रमों, संस्थानों और प्रतिष्ठानों में राजभाषा प्रभाग की स्थापना हुई जहाँ अनुवाद कार्य में प्रशिक्षित अनुवादक कार्य करते हैं। आज रोजगार के क्षेत्र में भी अनुवाद अग्रणी है। प्रति सप्ताह अनुवाद से सम्बन्धित जितने पद यहाँ विज्ञापित होते हैं अन्य किसी भी क्षेत्र में शायद नहीं होते।

प्राचीन काल से ही अनुवाद देश-विदेश में वाणिज्य और व्यापार के क्षेत्र में अत्यंत उपयोगी रहा है। प्राचीन काल से ही भारत, चीन और यूरोप में व्यापारी लोग अपने व्यापार के लिए देश-विदेश जाया करते थे और अनुवाद के सहारे ही व्यापार और वाणिज्य करते थे। वर्तमान समय में भी व्यापारी अपने उत्पादों और वस्तुओं की गुणवत्ता और उनके उत्तर विक्रय के संवर्धन के लिए अनुवाद का ही सहारा लेते हैं। विश्व स्तर पर बहुराष्ट्रीय कंपनियों की पैठ अनुवाद के सहारे ही जम पाई है। इसके अतिरिक्त अंतरराष्ट्रीय बाजार में उत्पादों और माल को खपाने की प्रतिस्पर्धा में तथा आगे बढ़ने के लिए भी अनुवाद का महत्व बढ़ जाता है। विज्ञापन और पर्यटन के क्षेत्र में अनुवाद की बढ़ती भूमिका व्यापारिक विकास में अनुवाद के महत्व का सबसे बड़ा उदाहरण है।

भारत जैसे विशाल राष्ट्र की एकता के प्रसंग में अनुवाद की आवश्यकता सर्वमान्य है। भारत की भौगोलिक सीमाएँ न केवल कश्मीर से कन्याकुमारी तक बिखरी हुई हैं बल्कि इस विशाल भूखण्ड में विभिन्न विश्वासों एवं सम्प्रदायों के लोग रहते हैं जिनकी भाषाएँ एवं बोलियाँ एक दूसरे से भिन्न हैं। भारत की अनेकता में एकता इन्हीं अर्थों में है कि विभिन्न भाषाओं, विभिन्न जातियों, विभिन्न सम्प्रदायों एवं विभिन्न विश्वासों के देश में भावनात्मक एवं राष्ट्रीय एकता कहीं भी बाधित नहीं होती। एक समय में महाराष्ट्र का जो व्यक्ति सोचता है वही हिमाचल का निवासी भी चिन्तन करता है। भारत के हजारों वर्षों के इतिहास चिन्तन ने इस धारणा की पुष्टि की है कि मध्ययुगीन भक्ति आन्दोलन से लेकर आज के प्रगतिशील आन्दोलन तक भारतीय साहित्य की दिशा एक रही है। और इसका श्रेय केवल अनुवाद को ही जाता है कि जिस समय गोस्वामी तुलसीदास राम के चरित्र पर महाकाव्य लिख रहे थे, हिन्दी के समानान्तर ओड़िआ में बलराम, बांग्ला में कृत्तिवास, तेलुगु में पोतना, तमिल में कम्बन तथा हरियाणवी में अहमदबख्श अपने-अपने साहित्य में राम के चरित्र को नया रूप दे रहे थे।

कोई भी समाचारपत्र, रेडियो व टीवी चैनल ऐसा नहीं है, जिसमें हमें अनुवाद की जरूरत महसूस न होती है। सिनेमा भी अनुवाद का सहारा लेकर बुलंदियों को छू रहा है। टाइटेनिक, जुरासिक पार्क, थॉर, ऐनाकोंडा जैसी फिल्म जो भारत में बहुत ज्यादा प्रचलित हुई, इसका एक बड़ा उदाहरण है। अनुवाद को बढ़ावा देने के लिए सरकार ने नेशनल ट्रांसलेशन मिशन (एनटीएम) का गठन किया है। इसका मकसद

संविधान की आठवीं अनुसूची में सूचीबद्ध सभी भारतीय भाषाओं में ज्ञान ग्रंथों को सुलभ बनाना है। मीडिया के सभी क्षेत्रों में चाहे वह हिंदी/अंग्रेजी/भारतीय भाषा के समाचार हों चा चैनल हों, सभी जगह अनुवाद अहम भूमिका निभाता है। सफल पत्रकार बनने के लिए पत्रकारिता के साथ अनुवाद में दक्ष होना आवश्यक है। फिल्मों की कई भाषाओं में डबिंग अनुवाद द्वारा ही होती है। अर्थात् मीडिया का काम अनुवाद के बिना नहीं चल सकता। मीडिया की तरह अनुवाद भी सर्वव्यापी है और दोनों में एक गहरा अंत-संबंध है।

आगे, डबिंग अथवा ध्वनि अंतरण शब्द से हम सभी परिचित हैं। ध्वनि अंतरण के बिना टीवी और सिनेमा जगत अधूरा रह जाएगा और यह अपने लाखों की संख्या में दर्शकों को खो देगा। यह एक भाषा से दूसरी भाषा में किए गए अनुवाद को दर्शकों तक पहुँचाने का माध्यम है। आज डबिंग का महत्व मनोरंजन के हर क्षेत्र में दिखाई दे रहा है, चाहे वह कार्टून फिल्म हो, एनिमेशन फिल्म हो, फीचर फिल्म हो या कुछ और। रूडयार्ड किपलिंग की पुस्तक 'जंगल बुक' के मोगली के साथ हम सब का बचपन बीता है। यहीं प्रमाद आज बच्चों को 'डोरेमन', 'सिनचॉन', 'टॉम एंड जेरी' 'छोटा भीम' जैसे अन्य कार्टून फिल्म या एनिमेशन फिल्म देखकर मिलता है। इसी तरह विदेशों में बनी 'रामायण' और अंग्रेजी में बनी 'अलादीन' को बच्चे अपनी भाषा में देखकर गौरवान्वित महसूस करते हैं। सबसे बड़ी बात तो यह है कि डबिंग के माध्यम से ही डिस्कवरी और नेशनल ज्योग्राफिक जैसे ज्ञानप्रद चैनलों की पहुँच भारत के सभी राज्यों, वर्गों तक पहुँच पाई है। पिछले कुछ वर्षों से हिंदी में अंग्रेजी से डब की गई अनेक फिल्में प्रदर्शित हुई हैं। दक्षिण भारतीय भाषाओं में उत्तम कोटि की फिल्में बन रही हैं इन फिल्मों को आज प्रत्येक टी.वी. चैनल में भारतीय भाषाओं में देखी जा सकती है।

यह कहा जा सकता है कि अनुवाद विश्व को एक माला में पिरोने का कार्य करता आ रहा है। यह सभी बंधनों से मुक्त एक वैश्विक माहौल बनाने का कारक सिद्ध हुआ है। देशों के बीच दूरियां कम करने का एक सशक्त माध्यम है अनुवाद। वर्तमान के वैज्ञानिक युग में अनुवाद की अहम भूमिका स्थापित हुई है। दूसरे देशों के साथ कदम से कदम मिला कर चलने के लिए अनुवाद के बगैर इसकी कल्पना, कल्पना मात्र रह जाएगी। संचार माध्यमों में गतिशीलता बढ़ाने का कार्य अनुवाद द्वारा ही सम्भव हो सका है तथा गाँव से लेकर महानगरों तक जो भी अद्यतन सूचनाएँ हैं वे अनुवाद के माध्यम से ही एक साथ सबों तक पहुँच रही हैं।

"A book can never be translated perfectly, it can only be translated adequately, and the translations are better than the book occasionally."

- William Jerald Golding, (Booker and Nobel winner)

आधुनिक जीवन की जटिलताएँ



बीरेन्द्र यादव

व. लेखापरीक्षक

आधुनिक जीवन ने हमें कई नई सुविधाएँ दी हैं, लेकिन इसके साथ-साथ कुछ ऐसी जटिलताएँ भी उत्पन्न हुई हैं, जिनका सामना करना हमारे लिए चुनौतिपूर्ण हो गया है। पिछले कुछ दशकों में विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में इतनी तेजी से विकास हुआ है कि आज हम एक ऐसी दुनिया में रह रहे हैं, जहाँ जीवन पहले से कहीं अधिक तेज, गतिशील और

सुविधाजनक हो गया है। आधुनिक जीवन का आरंभ विज्ञान और प्रौद्योगिकी में सुधार से हुआ था। औद्योगिक क्रांति इलेक्ट्रॉनिक्स, इंटरनेट, मोबाइल फोन और आधुनिक चिकित्सा पद्धतियाँ ऐसी चीज़ें हैं, जिन्होंने हमारे जीवन को पहले से कहीं अधिक आसान बना दिया। जानकारी की प्राप्ति, चिकित्सा सेवा, शिक्षा, परिवहन और संचार के क्षेत्र में हुए परिवर्तनों में दुनिया को एक ग्लोबल विलेज बना दिया है। आजकल हम कहीं भी रहें, एक क्लिक में हम दुनिया के किसी भी हिस्से से जुड़ सकते हैं। मोबाइल फोन, इंटरनेट और सोशल मीडिया ने इस बदलाव को और भी तेज कर दिया है। शिक्षा, चिकित्सा, व्यापार और मनोरंजन सभी का स्वरूप बदल चुका है। आज एक सरल जोड़ घटाव के लिए भी हम कैलकुलेटर की मदद ले लेते हैं। इसने जीवन को सुविधाजनक तो बनाया है, लेकिन इसके साथ कुछ जटिलताएँ भी आई हैं, जिनका प्रभाव हम पर प्रत्यक्ष रूप से पड़ता है।

आधुनिक जीवन की सबसे बड़ी जटिलता समय की कमी और जीवन की तेजी से बढ़ती गति है। पहले समय का ध्यान रखते हुए हम जो काम करते थे, वह अब भागमभाग में बदल गया है। काम के घंटे लम्बे होते जा रहे हैं, और छुट्टियाँ, परिवार के साथ समय बिताने और खुद के लिए समय निकालना मुश्किल हो गया है। तेज़ गति से दौड़ता जीवन हमें मानसिक थकावट और शारीरिक स्वास्थ्य समस्याओं का सामना करा रहा है।

आज के समय में हम जितने अधिक तकनीकी रूप से सक्षम हो गए हैं, उतने ही अधिक निर्भर भी हो गए हैं। मोबाइल फोन, कंप्यूटर, इंटरनेट और अन्य तकनीकी उपकरणों के बिना हमारा दिन शुरू होने से लेकर खत्म होने तक की कल्पना भी मुश्किल

हो गई है। हालांकि यह तकनीकी विकास हमें सुविधाएँ प्रदान करता है, लेकिन साथ ही यह हमारी आत्मनिर्भरता को भी कमजोर करता है। हम अपनी छोटी-छोटी जरूरतों के लिए तकनीकी उपकरणों पर निर्भर हो गए हैं, जिससे हमारी सोच और कार्यशक्ति पर भी प्रभाव पड़ता है।

आधुनिक जीवन ने भले ही हमें डिजिटल माध्यम से एक दूसरे से जोड़ दिया हो, लेकिन इसने सामाजिक संबंधों की गुणवत्ता में गिरावट भी पैदा की है। लोग पहले की तरह एक दूसरे के साथ समय नहीं बिताते। आजकल परिवारों में भी संवाद की कमी देखने को मिलती है। काम का दबाव, पारिवारिक जिम्मेदारियाँ और सामाजिक अपेक्षाओं से व्यक्ति मानसिक स्वास्थ्य की समस्याओं से जूझ रहे हैं। आधुनिक जीवन के साथ पर्यावरणीय संकट भी गंभीर हो चुका है। बढ़ता प्रदूषण, जलवायु परिवर्तन, जंगलों की कटाई और अन्य प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन पर्यावरण को खतरे में डाल रहे हैं। हालांकि प्रदूषण और पर्यावरणीय असंतुलन के बारे में जागरूकता बढ़ी है, फिर भी इस दिशा में सरल कदम उठाने की आवश्यकता है। यह आधुनिक जीवन की जटिलताओं में से एक है, जो केवल मनुष्य के लिए नहीं, बल्कि पूरे ग्रह के लिए खतरे का कारण बन रही है।

आधुनिक जीवन ने हमें कई सुविधाएँ और उन्नति दी है, लेकिन इसके साथ कई जटिलताएँ भी उत्पन्न हुई हैं। यह सच है कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी के कारण हमारे जीवन में कई सुधार आए हैं लेकिन यदि हम इन जटिलताओं का सही तरीके से सामना नहीं करेंगे, तो हम मानसिक, शारीरिक और सामाजिक रूप से अधिक दबाव में आ सकते हैं। हमें समझना होगा कि तकनीकी उन्नति और भौतिक सुख-सुविधाएँ तो महत्वपूर्ण हैं, लेकिन मानसिक शांति, आत्मनिर्भरता, सामाजिक संबंध और पर्यावरण का संतुलन भी उतना ही जरूरी है।





भोजन की बर्बादी: एक गंभीर समस्या

अक्सर देखा जाता है कि लोग प्लेटों में बहुत सारा भोजन ले लेते हैं और कुछ खाते हैं, शेष भोजन छोड़ देते हैं। जिसे अंततः डस्टबिन में फेंक दिया जाता है।



हम लोग जो खाना आसानी से डस्टबिन में बिना कुछ सोचे समझे फेंक देते हैं। क्या आपने कभी सोचा है कि उसे तैयार होने में कितना समय, पानी, बीज, उर्वरक, किसानों की दिन-रात की मेहनत इत्यादि की आवश्यकता होती है। उदाहरण के लिए, गेहूँ की फसल को बुआई से लेकर कटाई तक लगभग 145 दिनों का समय एवं प्रति किलो गेहूँ के लिए लगभग 900 लीटर पानी, उर्वरक, किसानों की मेहनत की आवश्यकता होती है। इसी प्रकार, धान की अधिकांश किस्मों की बुआई से लेकर कटाई तक 105 से 150 दिनों का समय लगता है। हालाँकि, कुछ किस्मों को तैयार होने में लगभग 180 दिनों का समय लगता है। विशेषज्ञों के अनुसार, एक किलो धान तैयार होने में करीब 1800 लीटर से लेकर 4000 लीटर तक पानी की आवश्यकता होती है।

भारतीय संस्कृति में जूठन छोड़ना पाप माना गया है। दूसरी ओर, यहाँ तो अन्न को देवता का दर्जा प्राप्त है लेकिन तथाकथित कुछ लोग अपनी परंपरा एवं संस्कृति को भूलकर यह पाप किए जा रहे हैं। शादियों, उत्सवों या त्योहारों में होने वाली भोजन की



बर्बादी से हम सब वाकिफ हैं। इन अवसरों पर ढेर सारा खाना कचरे में चला जाता है। आजकल की शादियों में देखा जाता है कि बहुत सारे नए-नए पकवान एवं व्यंजन जैसे तरह-तरह के सूप, सलाद, चाट, चाइनीज़ फास्ट फूड, तरह-तरह की मिठाइयाँ, कचौड़ियाँ, आइसक्रीम इत्यादि स्टार्टर के रूप में होता है। उसके बाद मुख्य भोजन में भी विभिन्न प्रकार के नए-नए



अमित कुमार रवि
स.ले.प.अ.

व्यंजन बने होते हैं। सभी प्रकार के व्यंजनों का स्वाद चखने की लालसा में सभी प्रकार के स्टार्टर फूड को प्लेट में ले लिया जाता है। उन सभी में जो पसंद आता है उसे खाते हैं बाकी शेष को फेंक देते हैं। लोगों का स्टार्टर फूड से ही पेट लगभग भर जाता है। फिर भी लोग स्वाद चखने की लालसा से मुख्य भोजन में भी बने सभी व्यंजन को अपने प्लेटों में ले लेते हैं। इस प्रकार प्लेट पूरी तरह से भर जाता है। अक्सर देखा जाता है कि प्लेटों में जगह कम पड़ जाती है और चूँकि स्टार्टर फूड से ही लोगों का पेट भरा हुआ होता है इसलिए भरे हुए प्लेट से कुछ ही व्यंजनों को खाया जाता है, शेष को चखकर छोड़ दिया जाता है। अंततः भोजन को डस्टबिन में फेंक दिया जाता है। यह न केवल भोजन का अपव्यय है, बल्कि अन्न का अपमान भी है। यदि बचपन से बच्चों को यह संस्कार दिए जायें कि थाली में केवल उतना ही भोजन ले जितना खा सके, तो इस बुराई पर नियंत्रण किया जा सकता है। शादी में खाने की बर्बादी को रोकने के लिए लोगों को अपनी मानसिकता को बदलना ज़रूरी है। लोगों को अपनी पसंद की एक-दो सब्जियाँ, मिठाइयाँ और रोटी आदि लेना चाहिए और उसको समाप्त करके ही दूसरी खाने की चीज लेनी चाहिए। इससे खाने की बर्बादी काफी हद तक रोकी जा सकती है।

घर की महिलाएं इसमें सहयोगी हो सकती हैं। खासकर वे बच्चों में शुरू से यह आदत डालें कि थाली में उतना ही खाना लें जितनी भूख हो। साथ ही भोजन को हमारे थाली तक पहुँचने की प्रक्रिया को बताएं, जैसे बुआई से लेकर कटाई तक लगने वाले संसाधन, समय और किसानों की मेहनत इत्यादि। कभी संभव हो तो बच्चों को भौतिक रूप में भी फसल की कटाई, बुआई इत्यादि को दिखायें।

बदलाव की इस प्रक्रिया में धर्म, दर्शन, विचार एवं परंपरा का भी योगदान एक नए परिवेश को निर्मित कर सकता है।

आज तेजी से भागती दौड़ती दुनिया जमीन से लेकर आसमान तक नये-नये तरीकों का आविष्कार करती इस दुनिया में समस्याएँ हैं जो इंसानियत के सामने कुछ सवाल खड़ा करती हैं। सवाल बड़े हैं, इन सवालों में शामिल हैं - भूखमरी, कुपोषण और खाद्य सुरक्षा। इनमें भूखमरी आज से नहीं कई दशकों से एक बहुत बड़ी समस्या रही है। ऐसे में सवाल उठता है कि क्या इसे बदला जा सकता है? तो जवाब है हाँ, बिल्कुल बदला जा सकता है। भूखमरी का मतलब सिर्फ इतना नहीं है कि किसी को एक वक्त का खाना न मिले। भूखमरी शब्द दुनियाँ की एक बहुत बड़ी आबादी को सता रहा है, परेशान कर रहा है। इन सभी समस्याओं के बीच कोई हिम्मत से खड़ा है तो वह हैं हमारे अन्नदाता, जो हमारे लिए दिन रात मेहनत कर फसल उगा रहे हैं। जिनकी कृपा से हम अपना पेट भर रहे हैं। प्रतिदिन इन सामान्य क्रिया के पीछे कुछ ऐसा हो रहा है जो मानवता के लिए ठीक नहीं है।

दुनियाँ की आबादी लगभग 800 करोड़ से ज्यादा है। इस आबादी में से एक बहुत बड़ी आबादी आज भी भूखी रह जाती है। विश्व खाद्य संगठन रिपोर्ट 2024, जिसमें 2022 के जुड़े आँकड़े लिए गए हैं, के अनुसार दुनियाँ में 80 करोड़ लोग भूखमरी के

शिकार हैं। पूरी दुनियाँ की आबादी के लिहाज से देखें तो हर दस में से एक आदमी के पास स्वस्थ रहने जितना भी भोजन नहीं है। रिपोर्ट के अनुसार खाने योग्य भोजन का करीब 20% कचरे में फेंक दिया जाता है। जहाँ एक ओर दुनियाँ में करीब 78.3 करोड़ लोग खाली पेट सोने को मजबूर हैं, वहीं हर दिन करीब 100 करोड़ खुराक के बराबर भोजन बर्बाद किया जा रहा है। 2022 से जुड़े आँकड़ों को देखें तो साल में करीब 105.2 करोड़ टन से भी ज्यादा भोजन बर्बाद हो रहा है जो हर वर्ष प्रति व्यक्ति औसतन 132 किलोग्राम के बराबर है। रिपोर्ट के मुताबिक वैश्विक स्तर पर खाद्य पदार्थों की जो बर्बादी हो रही है उसका अधिकांश भाग यानी करीब 60% बर्बादी घरों में हो रहा है यानी हम-आप जो जरूरत से ज्यादा भोजन थाली में लेते हैं, जिनमें कुछ खाते हैं और कुछ डस्टबिन में डाल देते हैं। इससे बचने के लिए उतना ही भोजन थाली में ले जितना भूख हो या खाने का बचा हुआ हिस्सा, बाद में खाने के लिए सुरक्षित रखे या फिर कोई अन्य डिश बना लें। साथ ही, इसका एक बड़ा हिस्सा हमारे फ्रिज में बर्बाद हो जाता है। एक ही समय में बहुत सारा खाद्य पदार्थ लाकर रख देने से उनमें से बहुत सा फ्रिज में ही खराब हो जाता है। फ्रिज में जब भी नया सामान रखें तो पुराने को ऊपर या आगे रखें ताकि उन्हें पहले खत्म किया जा सके या हो सके तो उतना ही एक समय में खाद्य पदार्थ लाए जितना उपभोग किया जा सके। यदि घर परिवार में बर्बाद हो रहे इस भोजन की कुल मात्रा





को देखें तो वे 60 करोड़ (63.1 करोड़) टन से भी ज्यादा है यानी देखा जाए तो एक वर्ष में प्रति व्यक्ति करीब 79 किलोग्राम भोजन बर्बाद होता है। इससे ज्यादा दुखद क्या हो सकता है।



जहाँ एक तरफ इस भोजन की बर्बादी हो रही है वहीं वैश्विक स्तर पर 5 वर्ष के कम आयु के 15 करोड़ बच्चों का विकास इसलिए रुक गया है कि उनके आहार में आवश्यक पोषक तत्वों की कमी है, मतलब कि वे बच्चे किसी न किसी रूप में कुपोषण का शिकार हो रहे हैं।

इसी तरह खाद्य सेवा क्षेत्र में यानी रेस्तराँ एवं होटलों में 28% भोजन की बर्बादी होती है। भोजन की कुल मात्रा को देखें तो 29 करोड़ टन यानी एक वर्ष में देखा जाए तो प्रति व्यक्ति करीब 36 किलोग्राम भोजन बर्बाद होता है एवं फुटकर सेक्टर में 12% भोजन बर्बाद होता है। भोजन की कुल मात्रा को देखें तो 13 करोड़ (13.1 करोड़ टन) से भी ज्यादा यानी देखा जाए तो एक वर्ष में प्रति व्यक्ति करीब 17 किलोग्राम भोजन बर्बाद होता है। ये सभी आँकड़े पूरी तरह तैयार भोजन के आधार पर बताया गया है। बहुत सारे जो फल हैं, सब्जी हैं, अनाज हैं, खेतों में ही बर्बाद हो जाते हैं उसके आँकड़े को छोड़कर ये आँकड़ें बताए गए हैं। हाल में जारी आँकड़ों के अनुसार भोजन की हो रही ये हानि एवं बर्बादी वैश्विक स्तर पर ग्रीन हाउस गैस के 8 से 10% उत्सर्जन के लिए जिम्मेदार है, जो विमानन क्षेत्र से हो रहे कुल उत्सर्जन का 5 गुना है। इतना ही नहीं, इसकी वजह से जैव विविधता को भी भारी नुकसान हो रहा है तथा इसके साथ ही कृषि क्षेत्र पर भी भारी दबाव डाल रहा है। इससे साफ हो जाता है कि सबकुछ नीति निर्धारकों की तरफ छोड़ना सही नहीं है। ये जिम्मेदारी एक समाज के तौर पर हमको और आपको भी निभानी होगी। भोजन बर्बादी के प्रति बहुत कम लोग ध्यान देते हैं। अधिकांश लोग ये सोचते हैं कि हमारा पैसा है तो हम जितना चाहें उतना खरीद सकते हैं, हम जितना चाहें उतना बर्बाद कर सकते हैं।

भारतीय संस्कृति में अन्न को देवता का दर्जा हासिल है और थाली में जूठा छोड़ना पाप माना गया है, लेकिन आधुनिकता के इस दौर में हम अपने मूल्यों को ही भूलते जा रहे हैं और बाहरी दिखावे का चलन बढ़ता ही जा रहा है। भारत में बढ़ती संपन्नता के साथ ही लोग खाने के प्रति असंवेदनशील होते जा रहे हैं। खर्च करने की क्षमता के साथ ही खाना फेंकने की प्रवृत्ति भी बढ़ रही है। शादियों, पर्व-त्योहारों और पारिवारिक आयोजनों में भोजन की बर्बादी बढ़ती ही जा रही है। जब एक बड़ी आबादी को दो जून का खाना भी नसीब नहीं होता है उसी देश में भोजन की बर्बादी संवेदनहीनता की पराकाष्ठा है।

खाद्य प्रणाली जलवायु परिवर्तन में एक बहुत बड़ी भूमिका निभाती है इसलिए भोजन की बर्बादी पर रोक लगाने की जरूरत है। भारत में हर वर्ष लगभग 78.2 मिलियन टन से अधिक खाना बर्बाद होता है। प्रति व्यक्ति के हिसाब से देखा जाए तो भारत में हर व्यक्ति सालाना औसतन 55 किलो खाना बर्बाद करता है। जबकि एक ओर ग्लोबल हंगर इंडेक्स (GHI)- 2024 के अनुसार 127 देशों के सूचकांक में भारत 105^{वाँ} स्थान पर है, जो काफी निराशाजनक एवं चिंता का विषय है। 2024 में भारत का GHI स्कोर 27.3 है, जिसे GHI भूखमरी की गंभीरता के मापदंड के अनुसार “गंभीर” के रूप में वर्गीकृत किया गया है। यह इंडेक्स वैश्विक, क्षेत्रीय और राष्ट्रीय स्तर पर भूख को व्यापक रूप से मापने और ट्रैक करने का एक उपकरण है।

अंत में इतना ही कहेंगे-उतना ही खाना लें थाली में, व्यर्थ न जाए नाली में। खुद भी जागरूक रहे, दूसरों को भी जागरूक करें, ताकि जो भोजन नाली में जा रहा है वो किसी के थाली में जाए, किसी जरूरतमंद की जरूरत पूरी हो।



पैनेसिया



दीप नारायण

सहायक लेखापरीक्षा
अधिकारी

अपने इर्द-गिर्द व्याप्त बीमारियाँ, तनाव एवं असंतोष, तथा सामाजिक प्रदूषण, मुझे इनके निदान की ओर उन्मुख होने की प्रेरणा प्रदान करता है। जब भी किसी रोगी व्यक्ति से मिलता हूँ तो मुझे एक सन्देश देने की तीव्र उत्कंठा होती है कि आप स्वस्थ हो सकते हैं। मैं कई बार सोचता हूँ कि यह सन्देश मेरे अन्दर इतना ऊबाल क्यों मारता है। न तो मैं कोई डॉक्टर हूँ और न ही बहुत ज्ञानी। मैं यह भी स्पष्ट कर देना चाहता हूँ

कि मैं पूर्ण रूप से स्वस्थ व्यक्ति भी नहीं हूँ। मेरे बाल विहीन कपाल इस बात की तसदीक करते हैं। फिर भी अधिकतर मौकों पर लोगों को बीमारियों से छुटकारा पाने के नुस्खे बताने से अपने-आप को रोक नहीं पाता। इसके विपरीत, जब भी अपने हृदय के इस कारुणिक आवेग को रोककर मौन रह जाता हूँ तो अच्छा महसूस नहीं होता। आज भी इस लेख को लिखते समय मैं वही कर रहा हूँ। मतलब स्वस्थ रहने की सरल एवं रहस्यमय पद्धति से सभी को अवगत कराने को उद्धत हूँ।

मानव को छोड़कर सभी प्राणियों का स्वास्थ्य बहुत हद तक एक दैहिक विषय है, जिसे सभी प्राणी जीवन पर्यंत जन्मजात ज्ञान (innate ideas) से जीते हैं। इसके ठीक विपरीत मानव का स्वास्थ्य बहुत हद तक मानस जगत का विषय है। आधुनिक वैज्ञानिकों का भी यही मत है कि हमारी अधिकतर बीमारियाँ मनो-दैहिक (Psychosomatic) होती हैं। स्वास्थ्य के विषय में चर्चा करते मुझे अपनी मुखतापूर्ण हरकत पर हँसी आती है क्योंकि हमारी सभी चर्चाओं में शब्दों का प्रयोग होता है जिसे हम सुनकर, बोलकर, पढ़कर एवं लिखकर अनुभव करते हैं एवं अपने अनुभवों को इन्हीं माध्यमों से अभिव्यक्त करने का प्रयास करते हैं। जबकि स्वास्थ्य बेजुबानों की सहज जीवन शैली है। फिर क्या कारण है कि इस धरती का सबसे बुद्धिमान प्राणी सर्वाधिक बीमार है। यही नहीं

मनुष्यों के संसर्ग में रहने वाले पशु-

पक्षी जैसे अन्य प्राणियों के

साथ-साथ वनस्पति

जगत अर्थात्

पेड़-पौधे भी

बीमार हो

जाते हैं।

चिकित्सक

बिमारी का कारण जानने के लिए सर्वप्रथम जाँच करवाते हैं अर्थात् कोई भी बीमारी अकारण नहीं होती। यह कार्य-कारण सिद्धांत का स्पष्ट निदर्शन है। प्राचीन काल से हमारे वैज्ञानिक बीमारियों का कारण जानने और उनका निदान करने के लिए नित नूतन प्रयोग करते आ रहे हैं। आधुनिक चिकित्सा जगत की अंग प्रत्यारोपण एवं प्रयोगशाला में अंग सृजन जैसी हत्प्रभ कर देने वाली उपलब्धियों के बावजूद बीमारों की संख्या बढ़ती जा रही है। अब तो स्थिति ऐसी हो गई है कि तीस-पैंतीस वर्ष से अधिक आयु का शायद ही कोई पूर्ण स्वस्थ व्यक्ति दिखाई पड़ता हो। हालाँकि, एक बात में आधुनिक चिकित्सा जगत लगभग शत-प्रतिशत सफल रहा है और वह है रोगों का नामकरण कर लोगों को यह विश्वास दिलाने में कि यदि तुम्हें अमुक रोग हो गया तो यह असाध्य है और तुम्हें जीवन पर्यंत दवाओं के सहारे ही जीना होगा। रोगी यदि निर्धारित दवाओं का प्रयोग नहीं करे तो जीवन को खतरा हो सकता है और इन दवाओं को जीवन रक्षक दवाओं के रूप में श्रेणीबद्ध किया गया। यहीं से शुरू होता है द्वंद्व; क्या वाकई बिना दवाओं के जीवन नहीं जिया जा सकता। क्या सही है और क्या गलत। क्या करें और क्या नहीं। किसकी सलाह मानें, किसकी नहीं। सर्टिफिकेट वाले डॉक्टर की बात माने अथवा नीम हकीम की। अब तो CGHS भी एक ही रेफरल से तीन-तीन सुझावों की सुविधा उपलब्ध करा रहा है अर्थात् सरकार भी अनुभवी चिकित्सकों के सुझावों को वस्तुनिष्ठ नहीं मानती और हमें बहुविकल्पी परामर्शों में से स्वयं निर्णय लेने की स्वतंत्रता प्रदान करती है। इन्हीं अंधकारमय परिस्थितियों में लघु दीप के प्रकाश में स्वास्थ्य के संभावनाओं की तलाश का प्रयास है यह लेख।

स्वस्थ रहने एवं स्वस्थ होने के लिए बीमारियों के बारे में जानना आवश्यक नहीं है। जिस प्रकार अंधकार का कोई अस्तित्व नहीं है यह केवल प्रकाश के अभाव की दशा है, वैसे ही बीमारियाँ भी अस्तित्वहीन हैं, ये केवल स्वास्थ्य के अभाव के लक्षण हैं। इसलिए हमें स्वास्थ्य के बारे में जानकारी होनी चाहिए। सुनने में यह बड़ा अजीब लगता है क्योंकि हर कोई जानता है कि यदि आप बीमार नहीं हैं तो स्वस्थ हैं। एक बच्चा भी यह सब जानता है। मित्रों, यदि आप भी इस तरह से सोचते हैं तो थोड़ा ठहर जाएँ और फिर से अँधेरे और प्रकाश वाले उदाहरण पर विचार करें। क्या अँधेरे को हटाने के लिए अँधेरे पर फोकस करने से अँधेरा हट सकता है? चकमक पत्थरों को टकराकर चिंगारी निकालने के युग से लेकर वर्तमान में एल.ई.डी. बल्ब को रिमोट से जलाने की कला सीखकर हम सभी इतने बुद्धिमान तो हो ही गए हैं कि अँधेरा हटाने के लिए अँधेरे में ही स्विच टटोलते हैं। यह स्विच प्रकाश तंत्र के सर्किट के रिक्त स्थान को भर देता है और बल्ब तक ऊर्जा स्वयं प्रवाहित हो





जाती है। प्रकाश के आते ही आभासिक अँधेरा का अंत हो जाता है। जैसे हम अँधेरे को नहीं जान सकते; ज्ञान तो प्रकाश का ही हो सकता है। ठीक उसी तरह हमारे लिए जानने योग्य केवल एक ही विषय है जिसका वास्तविक अस्तित्व है; वह है स्वास्थ्य। अतः सबसे पहले हमें स्वास्थ्य की परिभाषा का ज्ञान होना चाहिए।

विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) के मुताबिक, स्वास्थ्य का अर्थ है: **“पूर्ण शारीरिक, मानसिक, और सामाजिक कल्याण की स्थिति”**। यह परिभाषा सिर्फ बीमारी या कमजोरी न होने को स्वास्थ्य नहीं मानती। इस वैश्विक संगठन की यह आधुनिक परिभाषा अति उन्नत है, किन्तु इस पूर्ण शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक कल्याण की स्थिति को प्राप्त करने के उपाय के लिए आधुनिक चिकित्सा जगत अभी भी प्रयासरत है। इसका कारण है इस परिभाषा के शब्दों को पूर्णतया आत्मसात नहीं करना। इस परिभाषा से यह तो स्पष्ट होता है कि हमारा स्वास्थ्य शरीर, मन एवं समाज के पूर्ण कल्याण की स्थिति का समुच्चय है लेकिन समाज शब्द की सार्थक विवेचना के बगैर पूर्ण स्वास्थ्य के परिस्थितियों की जानकारी संभव नहीं है। जरा प्राचीन ऋषियों की प्रार्थना पर गौर करें: **‘सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया, सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित् दुःख भागभवेत्’**। इसका मतलब है, ‘सभी सुखी हों, सभी रोगमुक्त रहें, सभी का जीवन मंगलमय हो और किसी को भी दुःख का भागी न बनना पड़े’। सामाजिक कल्याण के भाव को इस श्लोक के माध्यम से स्पष्ट तौर पर समझा जा सकता है कि हमारे ऋषियों के द्वारा समाज शब्द के बजाय सर्व शब्द का प्रयोग किया गया अर्थात् उन्होंने केवल मानव समाज की बात नहीं की बल्कि सभी प्राणियों के कल्याण की बात की है। स्पष्टतः व्यक्तिगत स्वास्थ्य सभी प्राणियों के कल्याण में सन्निहित है। अब जरा सोचिए यदि हमारा फोकस केवल हमारे अपने शरीर पर होगा तो पूर्ण स्वास्थ्य कैसे प्राप्त हो सकता है क्योंकि स्वास्थ्य तो शरीर, मन एवं सर्व कल्याण का समुच्चय है।

वैश्विक स्तर पर विश्व स्वास्थ्य संगठन एवं संयुक्त राष्ट्र संघ से लेकर व्यक्तिगत स्तर पर हम सभी सर्व कल्याण के मुखौटे को लगाए चल रहे हैं। जिस प्रकार अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सरकारें कार्बन फुट प्रिंट घटाने की बातें करती हैं और विकसित देश, थर्ड वर्ल्ड के देशों में अपने तकनीकों का अंतरण कर, विकसित देशों की उपभोक्ता वस्तुओं का उत्पादन अन्य विकासशील देशों में करते हैं और न केवल सह-उत्पाद के रूप में सृजित कचड़े से अपना पिंड छुड़ाने का प्रयास करते हैं अपितु गरीब देशों में अपने कचड़े को डंप भी करते हैं उसी प्रकार शहरी पॉश इलाके का कचड़ा ग्रामीण गरीबों के इलाकों में डंप कर दिया जाता है। नगर निगम क्षेत्र के इलाके स्वच्छता के नमूने बन जाते हैं और जिस इलाके में कचड़े डंप किये जाते हैं वहाँ का स्वच्छता एवं स्वास्थ्य सर्वेक्षण शायद ही होता हो।

खैर, प्रकृति भेदभाव नहीं करती; दूर पड़े कचड़े के ढेर से निकलने वाली प्रदूषक गैसों को हवा अपने में आत्मसात कर लेती है और वर्षा जल के साथ घुल-मिल कर यह कचड़ा पुनः लौट कर खेत-खलिहान से लेकर आलिशान मकान में भी आता है, किन्तु सूक्ष्म रूप में। बीमारियाँ खर-पतवार की तरह हमारे साफ-सुथरे, चिकने-चुपड़े सुपोषित शरीर में भी घर बना लेती हैं। इसी प्रकार शोषण चाहे वह मनुष्यों, अन्य प्राणियों, वनस्पतियों, पर्वतों अथवा नदियों का हो उसका खामियाजा बीमारियों के रूप में हमें भुगतना ही पड़ता है। चूँकि हमारा पूरा तंत्र व्यक्तिगत न होकर सामाजिक रूप में संगठित होता है हमारे व्यक्तिगत कृत्य चाहे अच्छे हों या बुरे; पूरे समाज को तदनुरूप प्रभावित करते हैं। यही कारण है कि जिन्हें हम संयमित एवं आदर्श जीवन जीने वाला समझते हैं उन्हें भी बीमारियाँ जकड़ लेती हैं। शोषण एवं प्रदूषण के इस सामूहिक तंत्र में किसी खास व्यक्ति को दोषसिद्ध नहीं किया जा सकता। इसीलिए हम सभी अपने पापों से बचते हुए प्रतीत होते हैं किन्तु बीमारियाँ हमें नहीं छोड़ती। यह दिगर बात है कि उच्चरक्तचाप, मधुमेह, तनाव-अनिद्रा एवं कब्ज-गैस की दवा खाकर अच्छे-अच्छे चमकदार सूट-बूट में प्रतिदिन गोलियाँ खाते हुए हम स्वस्थ दिखने का नाटक करते हैं और इसे ही सामान्य मानते हैं। क्या हम यह सब नहीं जानते? हाँ, हम सब इन बातों को जानते हैं, किन्तु इस जानकारी के समानांतर हमारे व्यक्तिगत स्वार्थ के एजेंडे अधिक प्रबल हैं। परिणामतः हम और ज्यादा बीमार होते जा रहे हैं और स्वास्थ्य जो परमार्थ है वह पीछे छुटता जा रहा है। प्राचीन काल से ही सभ्य समाज का प्रश्न यह नहीं है कि हमें धर्म-अधर्म का ज्ञान है अथवा नहीं बल्कि प्रश्न यह है कि हमारी प्रवृत्ति धर्म की तरफ तथा अधर्म से निवृत्ति की ओर उन्मुख है या नहीं।

महाभारत में दुर्योधन का एक कथन जो हम सभी पर लागू होता है:

**जानामि धर्म न च मे प्रवृत्तिर्जानाम्यधर्म न च मे निवृत्तिः ।
केनापि देवेन हृदि स्थितेन यथा नियुक्तोऽस्मि तथा करोमि ॥**

इसका अर्थ है: मैं धर्म को जानता हूँ, पर उसमें मेरी प्रवृत्ति नहीं होती और अधर्म को भी जानता हूँ, पर उससे मेरी निवृत्ति नहीं होती। मेरे हृदय में स्थित कोई देव है, जो मेरे से जैसा करवाता है, वैसा ही मैं करता हूँ।

यह प्रसंग मैं इसलिए बता रहा हूँ क्योंकि आज भी वही प्रश्न खड़े हैं: सभी जानते हैं कि माँसाहार, नशाखोरी, पैकेज्ड वस्तुओं का सेवन, वनों की कटाई, कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिए रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों एवं कृत्रिम हार्मोन का प्रयोग तथा गलत जीवनशैली का तनाव हमारी सेहत को प्रभावित करता है लेकिन इन्हें छोड़ने की हमारी प्रवृत्ति नहीं है। मतलब हम बीमारियों का रोना तो रोते हैं किन्तु स्वस्थ होने की हमारी प्रवृत्ति नहीं है। ऐसा लगता है

मानो हम इस रोगी जीवनशैली के आदि हो गए हों। आज जब मड हाउस एवं इकोफ्रेंडली घरों के निर्माण को संभ्रांत की निशानी माना जा रहा है तब हम अपने कमरों के इन्टेरियर डिजाइनिंग में दर्जनों बल्ब एवं बिजली के सौकेट्स का जाल बुन रहे हैं। अभी तो वायु, जल, भूमि एवं ध्वनि प्रदूषण से निपटने के प्रयास शुरू ही हुए हैं तथा प्रकाश प्रदूषण की चर्चा तक शुरू नहीं हुई है तो अदृश्य इलेक्ट्रोमैग्नेटिक रेडियेशन के दुष्प्रभावों की बात कौन करेगा? जब पश्चिमी जगत का प्रबुद्ध वर्ग जंतु प्रोटीन को हृदय रोग, मधुमेह एवं कैंसर जैसे रोगों का कारण मान कर वेगन बन रहा है तब हमारे यहाँ “संडे हो या मंडे रोज खाओ अंडे” का नारा बुलंद हो रहा है। हमारा देश अपनी पुरानी प्राकृतिक जीवन शैली को छोड़कर मधुमेह और कैंसर की राजधानी बनने को लालायित है। क्या जिन बातों की चर्चा मैंने की उन बातों को लोग नहीं जानते? आज सूचना प्रौद्योगिकी की उन्नत दुनिया ने प्रत्येक जानकारी को सर्वसुलभ बना दिया है। आज हम सभी बहुत से विषयों के जानकार बन गए हैं किन्तु सही मायने में स्वयं के बारे में नितांत अज्ञानी हैं। जरा सोचिए कि वित्तीय सलाहकार यदि निर्धन हो तो क्या आप उससे सलाह लेंगे? क्या आप गाड़ी के कल-पुर्जों की अच्छी जानकारी रखने वाले किन्तु हमेशा दुर्घटनाग्रस्त होने वाले वाहन चालक की गाड़ी में बैठना चाहेंगे? फिर बीमार चिकित्सकों से स्वास्थ्य की उम्मीद बेबुनियाद है। उक्त परिस्थितियाँ निराशाजनक हैं और ऐसी परिस्थिति में भी क्या कोई समाधान है? हाँ, अवश्य है। उस समाधान का नाम है ध्यान। एक सूत्र जान लें: **ध्यान से ज्ञान और ज्ञान से मुक्ति**। किससे मुक्ति? भय से मुक्ति। तनाव से मुक्ति। अनिद्रा से मुक्ति। एडिक्शन से मुक्ति। बीमारियों से मुक्ति। आर्थिक तंगी से मुक्ति। घरेलू कलह से मुक्ति। गुलामी से मुक्ति। राष्ट्रों को युद्ध से मुक्ति। संसार को दुख से मुक्ति और व्यक्ति को मृत्यु से मुक्ति। अब जिसे जिस चीज से मुक्ति चाहिए वह इसका प्रयोग कर सकता है। यह सनातन प्रयोग है और यही पैनेसिया है। पैनेसिया अंग्रेजी भाषा का शब्द है ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी के अनुसार इसका अर्थ है सभी समस्याओं का एक हल। हिंदी में इसका पर्यायवाची शब्द रामबाण हो सकता है, किन्तु साम्प्रदायिकता के प्रदूषित माहौल में सेक्युलर शब्दों का चयन अत्यावश्यक है क्योंकि स्वास्थ्य तो जाति, धर्म, लिंग एवं देश-काल से परे समस्त सृष्टि का परमार्थ है। सच तो यह है कि स्वास्थ्य ही आध्यात्मिकता के माप का पैमाना हो सकता है।

ध्यान सकल रोगहारिणी एवं सकल भोग कारिणी है। ध्यान, सिर दर्द से लेकर कैंसर तक को, ठीक करने में सहायक सिद्ध हो सकता है। अब हमें ध्यान के विषय में जानना चाहिए क्योंकि यह वह उपकरण है जो हमें हमारी सभी समस्याओं का समाधान प्रस्तुत कर सकता है। ध्यान शब्द से पौराणिकता की झलक महसूस होती है इसलिए मैं पढ़े-लिखे आधुनिक लोगों के साथ मेडिटेशन शब्द का

इस्तेमाल करना अधिक पसंद करता हूँ। मेरे आश्चर्य की तब सीमा नहीं होती जब इससे अनभिज्ञ लोग भी मेडिटेशन को एक वैज्ञानिक प्रक्रिया समझते हैं और यह सच है एवं वैश्विक तौर पर मान्य है। विगत 21 दिसंबर 2024 को संयुक्त राष्ट्र संघ के द्वारा पहली बार वर्ल्ड मेडिटेशन दिवस मनाया गया। स्पष्ट है कि हमारे प्राचीन ऋषियों का विज्ञान, औपनिवेशिक काल में सपेराओं की कला कह कर जिसकी खिल्ली उड़ाई जाती थी, अब सार्वभौमिक मान्यता की ओर बढ़ रहा है। पिछली शताब्दी से ही पूरी दुनिया में, खासकर पश्चिमी जगत में, नवीन वैज्ञानिक तकनीकों के आधार पर मेडिटेशन के फायदों पर अनुसंधान हो रहे हैं और लोग इस पुरातन भारतीय ज्ञान को स्वीकार कर रहे हैं। मेडिटेशन की प्रक्रिया को बड़ी सहजता से सीखा जा सकता है। वैसे तो ध्यानयोग अनादी काल से हमारे सनातन संस्कृति का हिस्सा रहा है किन्तु इसे हिमालय की कंदराओं एवं ऋषियों के आश्रमों से निकालकर जन सामान्य के बीच समाजिक आन्दोलन के रूप में प्रसारित करने का श्रेय आज से 2500 वर्ष पूर्व महात्मा बुद्ध को जाता है। बुद्ध ने पाली भाषा में इसे “**आनापानसति**” कहा। आन का अर्थ है अन्दर आने वाली साँस एवं अपान का अर्थ है बाहर जाने वाली साँस तथा सति का अर्थ है साथ होना या घुलमिल जाना। मतलब अपनी आती-जाती साँसों के साथ होना। आमजन की भाषा के सरल शब्दों में इस गूढ़ आध्यात्मिक रहस्य को जन सामान्य तक प्रसारित करने के कारण बौद्ध काल में ध्यान धार्मिक जीवन की सहज शैली बन गई थी। कालांतर में धर्म का आध्यात्मिक विज्ञान सामाजिक रूढ़ियों में सिमट कर अपनी प्रासंगिकता खो देता है क्योंकि यह जीवंत विज्ञान है, जिसे तर्कों एवं शास्त्रार्थों के बजाय अनुभव से जानना होता है। ध्यान का अनुभव इतना स्पष्ट एवं सरल होता है कि इसे अल्पायु के बच्चों से लेकर मृत्यु शैथ्या पर पड़ा वृद्ध भी अनुभव कर सकता है। आनापानसति ध्यान पद्धति के अभ्यास के लिए किसी भी मध्यस्थ गुरु की कोई आवश्यकता नहीं है। इसके लिए अपने उम्र के हिसाब से जैसे पाँच वर्ष के बच्चे को पाँच मिनट, 25 वर्ष के व्यक्ति को 25 मिनट, 50 वर्ष के व्यक्ति को 50 मिनट.... प्रतिदिन नियमित अपनी आती-जाती साँसों के अवलोकन का अभ्यास करना चाहिए। जैसे किसी भी विधा को सीखने में कुछ वक्त लगता है उसी तरह ध्यान सीखने के लिए भी कम से कम चालिस दिन का नियमित अभ्यास आवश्यक है। मतलब चालिस दिनों में हमें ध्यान का स्वयं अनुभव हो जाता है और यह हमारी जीवनशैली बन जाती है। ध्यान का मतलब है विचारों के असीमित प्रवाह से अपने मन को आराम प्रदान करना। जब हम ध्यान करते हैं तो हमारा मन शांत होने लगता है और हम ब्रह्मांडीय ऊर्जा को अधिक मात्रा में ग्रहण करने लगते हैं, जिससे हमारा शरीर निर्मल होने लगता है और हम स्वस्थ होने लगते हैं। ध्यान करने के लिए हमें आरामदेह स्थिति में आलथी-पालथी मारकर सुखासन में अथवा कुर्सी/सोफे पर अपने



पैरों को क्रॉस कर बैठना चाहिए, अपने दोनों हाथों की उँगलियों को आपस में फँसाकर गोद में रखकर सीधा किन्तु शरीर को तनावरहित एवं ढीला छोड़ देना चाहिए। आँखों को बंद कर अपनी जागरूकता को आती-जाती साँसों पर केन्द्रित करना चाहिए। आती हुई साँस एवं जाती हुई साँस का अवलोकन करने से मन विचार शून्य होने लगता है। आँखों से हम बाह्य भौतिक जगत का अवलोकन करते हैं लेकिन आँखें बंद करने पर हम मनोजगत में विचरण करने लगते हैं जबकि ध्यान निर्विचार अवस्था है। बहुत लोग ध्यान का मतलब किसी आराध्य देव, मंत्र अथवा नाम जप पर एकाग्रचित होना समझते हैं, जबकि हमारे शास्त्रों में स्पष्ट कहा गया है, “**ध्यान निर्विषय मनः**” मतलब मन को निर्विषय करना यानी कुछ भी सोच-विचार नहीं करना ही ध्यान है। महर्षि पतंजलि ने भी योगसुत्र में **योगश्चित्तवृत्ति निरोधः** कहा अर्थात् मन में उठने वाले विचारों का रुक जाना ही ध्यान है। हमारा मन एक बार में एक ही कार्य कर पाता है चाहे तो विचार करे या अपनी साँसों का अवलोकन। ध्यान के दौरान बार-बार मन में विचारों का भटकना एकदम स्वाभाविक है इसलिए हमारा कार्य विचारों को रोकने के बजाय बार-बार अपनी आती-जाती साँसों को महसूस करते रहना है। साँसों का अवलोकन करने से हम अपनी स्वयं की अंतर्गता करते हैं और स्वयं से जुड़ जाते हैं।

ध्यान महज श्वासानुसंधान है इसलिए इसे किसी भी धार्मिक मान्यतावाले आस्तिक अथवा किसी भी ईश्वरीय सत्ता को नहीं मानने वाले नास्तिक भी सहज ही अपना सकते हैं क्योंकि यहाँ किसी भी मत-पंथ अथवा मान्यता का भेद नहीं है। किसी को भी अपनी सामान्य साँसों का अवलोकन करने में दिक्कत नहीं हो सकती चाहे वह स्वस्थ हो अथवा अस्वस्थ; शिक्षित हो या अशिक्षित; धनी हो या निर्धन; व्यस्त हो या बेरोजगारी से परत। बहुत से लोग इसे कठिन यौगिक क्रिया समझते हैं जो केवल तपस्वियों के बस की बात है और गृहस्थ जीवन में ध्यान को अत्यधिक कठिन मानते हैं जबकि वास्तविकता ठीक उलट है। सभी सांसारिक कर्तव्यों के निर्वहन के साथ-साथ दिन भर में किसी भी समय घर के किसी कोने में कुछ मिनटों तक आँखें मूंदकर बैठना क्या कोई मुश्किल कार्य है? मेरा मानना है कि आलसी लोग भी इसे आसानी से कर सकते हैं क्योंकि न तो इसमें भाग-दौड़ है और न ही इसमें कोई थकान होती है। कई लोग सोचते हैं कि हम एकदम शांत वातावरण में ही ध्यान कर सकते हैं लेकिन यह बात भी सत्य नहीं है क्योंकि थोड़े से अभ्यास से ही शोरगुल वाले स्थान पर भी ध्यान करना सुगम हो जाता है। ध्यान के साथ यदि संगीत को जोड़ दिया जाय तो ध्यान बहुत अच्छे से होने लगता है इसलिए म्यूजिक सिस्टम अथवा मोबाईल में किसी वाद्य यंत्र का शास्त्रीय संगीत लगाकर ध्यान का अभ्यास करने से गहरे ध्यान का अनुभव कम

समय में ही पाया जा सकता है। खुली प्रकृति में अथवा किसी पार्क या मैदान में ध्यान करने से भी गहरे ध्यान का अनुभव होता है। परिवार के सदस्यों के साथ समूह में ध्यान करना अथवा सामूहिक ध्यान सत्रों में भाग लेने से ध्यान का आनंद और भी बढ़ जाता है। इसी तरह पूर्णिमा एवं अमावस्या के समय ध्यान के दौरान अधिक ऊर्जा की स्पष्ट अनुभूति होती है।

महर्षि प्रभाव

अमेरिका में महर्षि महेश योगी ने 1974 में प्रतिपादित किया था कि यदि किसी नगर की कुल जनसंख्या का एक प्रतिशत आबादी भी ध्यान का अभ्यास करता है तो उस नगर में सकारात्मक परिणामों का मापनीय प्रभाव उत्पन्न हो सकता है। इस पर कई शोध किये गए जिनमें से एक अनुसंधान कार्यक्रम का उल्लेख करना समीचीन होगा। अमेरिकी प्रशासन द्वारा वाशिंगटन डी.सी. में 7 जून से 30 जुलाई 1993 तक सामूहिक ध्यान के प्रभाव पर अनुसंधान किये गए। 4000 ध्यानी लोगों के एक समूह के ध्यान कार्यक्रम के प्रभाव का आकलन किया गया। इस प्रायोगिक कार्यक्रम के निरीक्षण बोर्ड के 27 सदस्यों में स्वतंत्र वैज्ञानिकों के साथ-साथ नेतृत्वशील नागरिक भी सम्मिलित थे। ध्यान कार्यक्रम के इस अनुसंधान का निष्कर्ष निकाला गया कि शहर में अपराधों में 48% तक की गिरावट के साथ-साथ क्लिंटन प्रशासन के निर्णयों में भी गुणात्मक अभिवृद्धि हुई।

ध्यान के साथ मैंने भी थोड़े प्रयोग किये हैं खासकर बीमार पड़ने पर और मैं तीन वर्ष से अधिक अवधि से बिना किसी भी दवा के सिर दर्द, बुखार, चोट एवं मानसिक तनाव को ठीक कर लेता हूँ। अपने अनुभव से सबों को मेरा एकमात्र सन्देश है कि आनंदपूर्ण जीवन जीने के लिए रोजमर्रा के व्यस्ततम जीवन की भागदौड़ के बीच थोड़ी देर कुछ मिनटों के लिए ठहर जाँ। जब मैं अपने मित्र बंधुओं को यह बात कहता हूँ तो अधिकतर लोगों की एक ही प्रतिक्रिया होती है; वह है समय का अभाव। लोग कहते हैं कि समय कहाँ है ध्यान करने के लिए। हम कोई साधु-संत थोड़े हैं जो आँखें मूंदकर बैठ जाएँ और हाथ पसारकर जीवन चला लें। मैं उन सबों को कहना चाहता हूँ कि दिन भर अपने सभी दायित्वों का निर्वहन करते हुए रात्रि के समय बिस्तर पर जाने के पूर्व थोड़ी देर बैठकर ध्यान करें और साँसों को निहारते हुए सो जाएँ। आपकी संपूर्ण निद्रा अवधि ध्यान में परिवर्तित हो जाएगी। अनिद्रा एवं तनाव मिट जाएगा और आपके अन्दर एक स्वस्थ रूपांतरण शुरू हो जाएगा। आवश्यकता है तो केवल एक चाहत की: बदलाव की चाहत। रोगी से निरोगी होने की चाह। दवा एवं परनिर्भरता से आत्मनिर्भरता की चाह। जहाँ चाह वहाँ राह; ध्यान वही आनंददायक राह है। इस राह से गुजरने पर जीवन आनंदमय हो जाता है।

एहसास

(दो जज़्बातों के बीच बनते बिगड़ती रिश्तों की कहानी)



बिनोद कुमार प्रभात

(पर्यवेक्षक) कार्यालय-
प्रधान निदेशक, लेखा
परीक्षा (केंद्रीय)
लखनऊ, शाखा-राँची

“शक जिस रास्ते से दिल के अंदर दाखिल होता है, मोहब्बत ठीक उसी रास्ते से बाहर निकल जाता है।”

गंगा की लहरों पर सूरज की पहली किरण चमक रही थी। मंजू सिंघानिया ने शांत लेकिन भारी मन से खिड़की के पास बैठकर सुबह की चाय का कप उठाया। उसकी ज़िंदगी एक आदर्श गृहिणी की तरह थी। पति राज सिंघानिया और दस वर्षीय बेटा बन्नी के साथ उसका परिवार भरा-पूरा था, लेकिन इस भरे परिवार में भी कहीं न कहीं मंजू अकेलापन महसूस करती

थी, क्योंकि राज अपने ऑडिट (लेखापरीक्षा/अंकेक्षण) के कार्य में इतना व्यस्त रहता कि मंजू की बातें उसे सुनाई ही नहीं देतीं, क्योंकि कार्यालय के रिव्यू वर्क में एक अलग प्रेशर एवं टेंशन रहता है, मतलब ‘समय कम और काम ज्यादा’। इस कारण, मंजू के अंदर की चाहत, उसका दर्द, उसकी हंसी, उसके ख्वाब सब अनसुनी हो जाती थीं।

एक दिन जब मंजू बाज़ार गई तो उसकी मुलाकात प्रभात श्रीवास्तव से हुई। प्रभात, मंजू के कॉलेज का पुराना दोस्त था, जो अचानक इतने सालों बाद शहर में आया था। उनकी मुलाकात संयोगवश हुई लेकिन प्रभात का मुस्कुराता चेहरा और उसका बेतकल्लुफ स्वभाव मंजू को पुरानी यादों में ले गया। उन दोनों ने बाज़ार के एक छोटे से सीसीडी कैफ़े में बैठकर कॉफी पीया और ख़ूब मज़े की बातें किये। उन्हें लगा कि फिर से स्टूडेंट लाईफ़ वाला वक़्त आ गया हो। प्रभात ने मंजू से उसकी ज़िंदगी के बारे में पूछा। मंजू ने हँसते हुए कहा- “ज़िंदगी चल रही है, बस”, लेकिन उसकी आँखों में प्रभात ने छुपे हुए दर्द को फौरन महसूस कर लिया। प्रभात ने मंजू को समझने की कोशिश की और उसका बचपन का दोस्त अब एक गहरा सहारा भी बन गया। जब भी मंजू अपनी भावनाओं को समझ नहीं पाती थी, प्रभात उसे सुनता। उसने मंजू को जज नहीं किया, न ही उसके सवालों का जवाब ही दिया, बस उसे वो मन का सुकून दिया, जिसकी उसे सालों से तलाश थी। मंजू और प्रभात की दोस्ती धीरे-धीरे गहरी होती चली गई, दोनों के बीच की बातचीत आत्मीय और सुकून देने वाली हो गई। प्रभात का साथ मंजू को वो सुकून देता था, जो उसे राज से कभी नहीं मिला। वो अपनी छोटी-छोटी परेशानियाँ, अपने अधूरे

ख्वाब और अपने दर्द प्रभात से बांटने लगी। प्रभात उसे बेझिझक सुनता और उसकी हर बात पर सिर्फ मुस्कुराता। एक दिन, जब मंजू ने प्रभात से पूछा, “तुमने शादी क्यों नहीं की?”.., तो प्रभात ने कहा, “शायद इसलिए कि मुझे अभी तक वो साथी नहीं मिला जो मुझे समझ सके।” इस जवाब ने मंजू के दिल में हलचल मचा दी। वो सोचने लगी कि शायद उसे ही कभी वो साथी नहीं मिला, जो उसे समझ सके। इस बीच, राज को मंजू की बदली हुई दिनचर्या का एहसास हो रहा था। मंजू अब पहले से ज्यादा खुश रहने लगी थी। उसके चेहरे पर एक नई चमक थी लेकिन राज इसे नहीं समझ सका और वो इसे सामान्य मानकर अपने काम की व्यस्तता में डूबा रहा।

इस कहानी ने एक नया मोड़ तब लिया जब एक दिन राज ने मंजू और प्रभात को इको पार्क में साथ देख लिया। मंजू खूब हँस-हँस कर और खुलकर बातें कर रही थी। राज ने कभी उसे इस तरह खुल कर हँसते हुए नहीं देखा था मानो कि उसे जन्मत मिल गया हो। यह देखकर वो परेशान हो गया। उसने मंजू से कुछ नहीं कहा, लेकिन उसके मन में सवाल उठने लगा और मंजू भी खुद से सवाल करने लगी। क्या वो प्रभात से कहीं प्यार तो नहीं करने लगी थी? क्या वो अपनी शादीशुदा ज़िंदगी में बेवफ़ाई कर रही थी? उसका मन इस द्वंद्व में फंस गया है। एक रात, जब राज घर लौटा तो उसने मंजू से सीधा सवाल किया कि “तुम प्रभात से क्यों मिलती हो?” मंजू के पास कोई जवाब नहीं था। वो चुप रही। उसके आँसू छलक पड़े। उसने राज से कहा, “तुमने कभी मेरी बातें सुनीं? अपने दिल की सुनीं? मुझे समझने की कभी कोशिश की कि मेरा दिल क्या चाहता है? सिर्फ अपने काम में मशगूल रहे।

राज को पहली बार अपनी ग़लती का एहसास हुआ, उसने पहली बार महसूस किया कि मंजू के साथ उसने कभी वो वक़्त नहीं बिताया, जो एक पति को अपनी पत्नी के साथ बिताना चाहिए।

अगले दिन, मंजू ने प्रभात से मिलने का फैसला किया। उसने प्रभात से कहा, “तुमने मुझे जो सुकून दिया, जो सहारा दिया, उसके लिए मैं हमेशा तुम्हारी आभारी रहूंगी लेकिन मैं अपनी ज़िंदगी को दो हिस्सों में नहीं बांट सकती।” तुम मेरी ज़िंदगी से हमेशा के लिए दूर हो जाओ”, लेकिन यह बात राज तक पहुंच गई। उसने मंजू और प्रभात की आखिरी मुलाकात की तरक्की देख ली थी। उसने मंजू को साफ शब्दों में कहा, “मुझे लगता है कि अब इस रिश्ते में भरोसा खत्म हो चुका है।” मंजू ने राज को पूरी सच्चाई बताई और कहा, “प्रभात मेरे लिए सिर्फ एक भूतकाल है।



तुम मेरे वर्तमान और भविष्य हो। अगर मुझसे कोई गलती हुई है तो मैं माफी मांगती हूँ, लेकिन मैंने कभी तुम्हारे साथ विश्वासघात नहीं किया।”

राज ने इसे समझने में वक़्त लिया, लेकिन आखिरकार उसने महसूस किया कि मंजू सही कह रही थी। उसने प्रभात को अपनी ज़िंदगी से पूरी तरह दूर कर दिया और अपनी शादी को एक और मौका दिया। प्रभात ने उसकी बात समझी। उसने कहा, “मंजू, प्यार का मतलब सिर्फ़ साथ रहना नहीं होता। अगर तुम्हारी खुशी तुम्हारे परिवार के साथ है, तो यही सही है लेकिन याद रखना, मैं हमेशा तुम्हारे लिए एक अच्छे दोस्त की तरह मौजूद रहूँगा।” मंजू ने एक गहरी सांस ली और प्रभात को अलविदा कहा। वो अपने परिवार के पास लौटी। राज ने भी अपनी गलती सुधारी। उसने मंजू को समझने की कोशिश की, उसके साथ ज़्यादा वक़्त बिताने का फैसला किया।

इस त्रिकोणीय कहानी में किसी ने किसी को नहीं खोया। मंजू ने अपने जीवन के ख़ालीपन को भरा, लेकिन अपने रिश्तों की गरिमा को बनाए रखा। प्रभात ने दोस्ती का फ़र्ज़ निभाया और राज ने अपनी पत्नी को समझने की नई शुरुआत की।

यह कहानी हमें सिखाती है कि रिश्ते में ईमानदारी और भरोसे की अहमियत होती है। पति-पत्नी के बीच किसी तीसरे इंसान की एंट्री सिर्फ़ शक और गलतफ़हमी को जन्म देती है। अगर कोई भी बात ऐसी हो जो दिल में बोझ बन रही हो, तो उसे अपने साथी के साथ साझा करना ही बेहतर है।

मंजू ने आखिरकार अपने रिश्ते को संभाल लिया, लेकिन यह अनुभव उनकी ज़िंदगी का एक ऐसा सबक बन गया जिसे वे कभी नहीं भूल पाएंगे। प्यार कई रूपों में आता है। यह जरूरी नहीं कि हर प्यार, रिश्ते का रूप ले। कभी-कभी प्यार सिर्फ़ एक एहसास होता है, जो हमें अपनी ज़िंदगी को बेहतर बनाने का रास्ता दिखाता है।

मंजू ने जब प्रभात को अलविदा कहा, तो उसके भीतर हलचल का तूफ़ान शांत हो गया। उसने अपने परिवार के साथ अपनी ज़िंदगी को नए सिरे से शुरू करने का फैसला किया। राज ने भी अपने व्यवहार में बदलाव लाने की ठानी। उसने महसूस किया कि प्यार और शादी सिर्फ़ जिम्मेदारियों का नाम नहीं, बल्कि एक-दूसरे को समझने और साथ निभाने की भी बात है।

कुछ महीनों तक सबकुछ सामान्य चलता रहा। राज अब मंजू को पहले से ज़्यादा वक़्त देने लगा था। दोनों के रिश्ते में वो गर्मजोशी लौट आई थी, जो सालों पहले खो गई थी। लेकिन मंजू के मन के एक कोने में प्रभात की यादें हमेशा धुंधली लेकिन मौजूद रहीं।

एक दिन, मंजू को अचानक प्रभात का एक ख़त मिला। उसमें लिखा था:

“प्रिय मंजू,

तुम्हारे जाने के बाद मैंने तुम्हें बहुत याद किया। तुम्हारी बातें, तुम्हारी मुस्कुराहट और उस सुकून को, जो तुम्हारे साथ होने से मिलता था, लेकिन तुम्हें खुश देखकर मैं संतुष्ट हूँ। मैं जानता हूँ, तुम्हारी जगह तुम्हारे परिवार के साथ है, लेकिन मैं भी तुम्हारी यादों से जुड़ा हूँ। मैंने यह तय किया है कि मैं अब अपने जीवन में एक नई शुरुआत करूँगा। तुम्हारी प्रेरणा ने मुझे वो ताक़त दी है। मेरे लिए दुआ करना।

तुम्हारा दोस्त,
प्रभात श्रीवास्तव

ख़त पढ़कर मंजू की आंखें नम हो गईं। उसने महसूस किया कि प्रभात का प्यार, दोस्ती और समझदारी कभी ख़त्म नहीं होगी, लेकिन अब वो बस यादों और प्रेरणाओं में मौजूद रहेगा।

प्रभात ने खुद को नई दिशा दी। उसने अपने छोटे से बिज़नेस को बढ़ाना शुरू किया और अपने गांव में एक स्कूल खोलने का सपना भी देखा। उसकी मुलाकात कविता प्रसाद नाम की एक शिक्षिका से हुई, जो उसकी तरह ही जीवन में रिश्तों और समझदारी को महत्व देती थी। धीरे-धीरे प्रभात और कविता प्रसाद के बीच दोस्ती बढ़ी। मंजू को जब यह ख़बर मिली कि प्रभात ने कविता से शादी कर ली है, तो उसके मन में एक अनोखी शांति छा गई। उसे खुशी थी कि उसका दोस्त भी अब अपनी ज़िंदगी के उस अधूरेपन को पूरा कर रहा है। राज अब पूरी तरह बदल चुका था। उसने मंजू के साथ समय बिताना शुरू किया, उसकी पसंद-नापसंद को समझा। दोनों ने साथ मिलकर छुट्टियाँ बिताईं, नए शौक अपनाए और एक-दूसरे के करीब आने का हर मौका तलाशा। एक रात, मंजू ने राज से कहा, “क्या तुम जानते हो, मैं प्रभात से क्यों मिली थी?” राज ने मुस्कुराते हुए जवाब दिया, “क्योंकि मैं तुम्हें वो वक़्त नहीं दे पाया, जो तुम्हें चाहिए था।” मंजू ने सिर हिलाया। “तुमने मुझे वापस मेरे अपने हिस्से का प्यार दिया। और मैं हमेशा तुम्हारे साथ रहूँगी।”

यह कहानी सिर्फ़ त्रिकोणीय प्रेम की नहीं, बल्कि आत्म-साक्षात्कार और रिश्तों में संतुलन की भी है। मंजू ने खुद को समझा, राज ने अपनी गलतियाँ सुधारीं और प्रभात ने अपनी नई राह बनाई। प्यार हमेशा साथ रहने का नाम नहीं होता। कभी-कभी इसका मतलब होता है किसी को खुश देखकर खुद भी सुकून महसूस करना। मंजू, राज और प्रभात ने यह समझा और अपने-अपने जीवन में खुशी और संतुलन पाया। रिश्तों को समझना और उनकी अहमियत को पहचानना ही प्यार का असली रूप है।

वाणी

“मीठी वाणी बोलिए, सबके मन समाया
बिन साबुन-पानी, मन निर्मल हो जाए।”



डॉ. शिप्रा शालिनी

आईन्द

हिंदी अनुवादक

राजभाषा अनुभाग

दृढ़ इच्छाशक्ति का दीर्घकालिक बंधन हमारे भीतर फैले अहंकार का विनाश करता है। प्राचीन काल में न तो प्रदूषण था, न ही प्रबंधन की कोई आवश्यकता थी। ऐसा इसलिए, क्योंकि मनुष्य प्रकृति की निर्मलता व सफाई से खिलवाड़ नहीं करता था, परन्तु वर्तमान युग में प्रबंधन की आवश्यकता इसलिए है क्योंकि हमने अपने निजी स्वार्थों व सुखों के लिए नैतिक व सामाजिक मूल्यों की अनदेखी करना शुरू कर दिया है।

वाणी पर संयम रखना यानी उस पर नियंत्रण रखना, यह विशेष कला कुछ गिने-चुने लोगों में ही पाई जाती है। इसके बावजूद हम इस हकीकत से भी मुँह मोड़ नहीं सकते कि आज समग्र संसार में तमाम लोगों की कटु वाणी, आपसी प्रेम में बाधा है। अज्ञानतावश आज हमारे संबंधों में कटुता बढ़ रही है। आपाधापी भरा जीवन जीते-जीते हम भूल जाते हैं कि कमान से निकला तीर, बीता

हुआ समय और मुख से निकली वाणी कभी वापस नहीं आते, मुँह से निकले शब्द औषधि भी बन सकते हैं और तलवार भी।

संसार में सबसे सस्ती और आसानी से उपलब्ध वस्तु है मीठी वाणी। मीठी वाणी बोलने से कभी भी हमारा नुकसान नहीं हो सकता है। यदि संसार में सबसे महँगी वस्तु है तो वह कटुबोली, जो ऐसा घाव देती है जिससे जीवन भर पीड़ा होती रहती है। इसलिए यदि हम जीभ पर नियंत्रण रखें तो सारी समस्या हल हो जाएगी व लड़ाई नहीं होगी।

मनुष्य को अपनी वाणी पर संयम रखना चाहिए। वाणी किसी को राजा बना देती है, तो किसी को रंक। अगर पशु मूक है और अचानक उसे मनुष्य की भाँति बोलने की शक्ति मिल जाए तो वह अनियंत्रित और असंयमित होकर बोलने लगता है। किस जगह में क्या बोलना है उसे उसका ज्ञान नहीं रहता है। स्वयं एवं दूसरों के जीवन को सुखी बनाना है, तो संयमित वाणी बोलना जरूरी है। ऐसा मत बोलो, जिससे किसी के मन को ठेस पहुँचे। आज हम देख रहे हैं कि गलत बयानों से राष्ट्रों में विवाद हो रहे हैं। इसी प्रकार, समाज व घरों में जुबान के कारण ऐसी घटनाएँ हो जाती हैं, जो भुलाए नहीं भूली जाती। ‘जुबान से किस प्रकार की वाणी बोली जाए?’ विषय पर कहा जा सकता है कि आदमी के शब्दों





में इतनी ताकत होती है कि इसके दम पर इंसान दुनिया अपनी मुट्ठी में कर सकता है। संयमित बोलने पर उन्होंने कहा कि आदमी को धन-दौलत से नहीं शब्दों से कंजूस होना चाहिए। इसलिए जो भी बोलें बहुत ही सोच समझकर बोलें।

कोई व्यक्ति किसी दिन दफ्तर में देर से आता है। देर से आने का कारण पूछने के बजाये उससे यदि ऐसा कहा जाए, “रोज आप दफ्तर में समय से आ जाते थे। आज क्या हो गया जो समय पर नहीं आ सके?” ...तो उसे बात बुरी नहीं लगेगी और देर से आने का सही कारण भी वह निःसंकोच बता देगा।

कुटुम्ब-परिवार में भी वाणी का प्रयोग करते समय यह अवश्य ख्याल रखा जाए कि हम जिससे बात करते हैं वह कोई मशीन नहीं है, रोबोट नहीं है, लोहे का पुतला नहीं है, मनुष्य है। उसके पास दिल है। हर दिल को स्नेह, सहानुभूति, प्रेम और आदर की आवश्यकता होती है। अतः अपने से बड़ों के साथ विनययुक्त व्यवहार, बराबरी वालों से प्रेम और छोटों के प्रति दया तथा सहानुभूति-सम्पन्न व्यवहार जादुई असर करता है।

बातचीत के तौर पर आपसी स्नेह को याद रखकर सुझाव दिये जायें तो कहीं भी वैमनस्य खड़ा नहीं होगा।

किसी के पति ने अपनी पत्नी से कहा कि आज भोजन अच्छा नहीं बना। इस पर पत्नी ने झुंझलाकर कहा, “किसी और जगह, होटल में जाकर खा लो या कोई दूसरी मेम साहब बुला लो।” पति को यह बात बुरी लगी। उसने भोजन की थाली दूर खिसका दी।

पत्नी अगर आपसी स्नेहपूर्वक कहती है, “कल से मैं विशेष ध्यान रखकर भोजन बनाऊँगी। आपको शिकायत करने का मौका नहीं मिलेगा।” तो ऐसी नौबत नहीं आती और स्नेह का पतला तंतु टूटने न पाता। अन्न का अनादर भी नहीं होता।

उसी प्रकार, यदि पत्नी पति से कुछ पूछे और पति झुंझला कर जवाब दे तो पत्नी का मन खिन्न हो जाएगा और पूरा दिन पत्नी उस खीज से काम करेगी और मनमुटाव बना रहेगा।

वैसे ही अगर पिता अपने बेटे को कहता है, “परीक्षा में तुम्हारे नम्बर खराब आए, तुम नालायक हो।” तो बच्चे के मानस पर उसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। इसके बदले अगर पिता कहे, “बेटा! मेहनत किया करो। एकाग्र होने के लिए थोड़ा ध्यान किया करो। इससे तुम अवश्य अच्छे नंबर ला सकोगे।” ऐसा कहने से बच्चे का उत्साह बढ़ेगा। पिता के लिए आदर भी बना रहेगा और वह आगे चलकर मेहनत करके अच्छे नंबर से पास होने का प्रयत्न करेगा।

दुकानदार के पास कोई ग्राहक आकर कहे, “यह चीज़ आपके पास से ले गया था, अच्छी नहीं है। वापस ले लो।” तो उस समय दुकानदार को उसके साथ तीखा व्यवहार नहीं करना चाहिए। उसे कहना चाहिए, “अगर आपको यह चीज़ पसंद नहीं है तो कोई बात नहीं। मेरे पास इसकी और भी कई किस्में हैं, देखता हूँ। शायद आपको पसंद आ जाए।” इस प्रकार ग्राहक की प्रसन्नता का ख्याल रखकर स्नेह और सहानुभूति का व्यवहार करना चाहिए। इससे वह दुकानदार का पक्का ग्राहक हो जाएगा।

“तुम्हें यह काम करना ही पड़ेगा।” नौकर से ऐसा कहने के बजाये यह कहो, “क्या यह काम कर दोगे?” तो वह नौकर उत्साह से आपकी प्रसन्नता के लिए वह काम कर देगा। अन्यथा, उसे वह काम बोझ प्रतीत होगा और वह उससे छुटकारा पाने के लिए विवश होकर करेगा जिसमें उसकी प्रसन्नता लुप्त हो जायेगी और काम भी असंतोषजनक ही होगा।

कहने के ढंग में मामूली फर्क कर देने से कार्यक्षमता पर बहुत प्रभाव पड़ता है। अगर किसी से काम करवाना हो तो उससे कहें कि अगर आपके लिए अनुकूल हो तो यह काम करने की कृपा करें।

बातचीत के सिलसिले में महत्ता दूसरों को देनी चाहिए, न कि अपने आपको। ढंग से कही हुई बात प्रभाव रखती है और अविवेकपूर्वक कही हुई वही बात विपरीत परिणाम लाती है।

दूसरों से मिल-जुलकर काम वही कर सकता है जो अपने अहंकार को दूसरों पर नहीं लादता। ऐसा अध्यक्ष अपने अधीनस्थ कर्मचारियों से कोई गलती हो जाए तो वह गलती को स्वयं अपने ऊपर ले लेता है और कोई अच्छा काम होता है तो उसका श्रेय दूसरों को देता है।

अपने साथियों, सहकर्मियों की व्यक्तिगत या घरेलू समस्याओं के प्रति सहानुभूति रखकर, यथाशक्ति उनकी सहायता करना दक्ष नेतृत्व का चिह्न है। कोई अगर अच्छा काम कर लाये तो उसकी प्रशंसा करना और जहाँ उसकी कमियाँ हों वहाँ उसका मार्गदर्शन करना भी दक्ष नेतृत्व की पहचान है।

अपने साथ काम करने वालों के साथ मैत्री और अपनत्व का सम्बन्ध कार्य में दक्षता लाता है। जहाँ परायेपन की भावना होगी वहाँ नेतृत्व में एकसूत्रता नहीं होगी और काम करनेवाले तथा काम लेनेवाले के बीच समन्वय न होने के कारण कार्य में हास होगा।

कई खेलों में एकजुट भावना से मिल-जुलकर खेलने से प्रायः खेल में दक्षता प्राप्त होती है और एकता को विजय मिलती है।



टीम में जहाँ आपस में मेल-जोल नहीं है, समन्वय नहीं है और परस्पर वैमनस्य है वहाँ अच्छे खिलाड़ियों के होते हुए भी वह टीम असफल होता दिखाई देता है। यदि टीम का कप्तान सब खिलाड़ियों के प्रति समान व्यवहार एवं सम्मान की भावना न रखकर ऊँच-नीच का भाव रखता है तो ऐसे टीम में विषमता पनपती है और असफलता ही हाथ लगती है।

दूसरों से काम लेने का ढंग भी उन्हीं लोगों को आता है जो प्रसन्नचित्त रहते हैं। प्रसन्नचित्त वह रह सकते हैं जो ध्यान करते हैं और संतसमागम करते हैं। उनके कहे अनुसार दूसरे लोग काम करते हैं।

कुछ लोगों के स्वाभाव में उद्विग्नता भरी रहती है, जैसे वह हमेशा झमेली या करेला खाए हुए हैं, मिसरी कभी खायी ही नहीं है। यदि वे किसी को कुछ काम करने के लिए कहते हैं तो सामने वाले व्यक्ति के हृदय में प्रतिकूल प्रतिक्रिया उत्पन्न होती है। इससे काम करनेवाला प्रसन्नचित्तता से उसमें भाग नहीं लेता, न अपनी जिम्मेदारी स्वीकार करता है। प्रतिकूल प्रतिभाव के कारण कहनेवाले की जीवनशक्ति भी क्षीण होती है और काम बिगड़ जाता है। इसके विपरीत यदि शान्ति एवं प्रसन्नचित्त से किसी को काम करने के लिए कहते हैं तो वह प्रसन्नतापूर्वक उस कार्य को संपन्न करता है। काम लेने का यही सही ढंग है और इसके विपरीत सब ढंग गलत हैं।

यह विचार छोड़ दो कि बिना डांट-डपट के, बिना डराने-धमकाने के और बिना छल-कपट के तुम्हारे मित्र-साथी, स्त्री-बच्चे या नौकर-चाकर बिगड़ जायेंगे। सच्ची बात तो यह है की डर, डांट और छल-कपट से तो तुम उनको पराया बना देते हो और सदा के लिए उन्हें अपने से दूर कर देते हो।

प्रेम, सहानुभूति, सम्मान, मधुर वचन, सक्रिय हित, त्याग-भावना आदि से हर किसी को सदा के लिए अपना बना सकते हो। तुम्हारा ऐसा व्यवहार होगा तो लोग तुम्हारे लिए बड़े-से-बड़े त्याग के लिए तैयार हो जाएंगे। तुम्हारी लोकप्रियता मौखिक नहीं रहेगी। लोगों के हृदय में बड़ा मधुर और प्रिय स्थान तुम्हारे लिए सुरक्षित हो जाएगा। तुम भी सुखी हो जाओगे और तुम्हारे संपर्क में आनेवाले को भी सुख-शांति मिलेगी।

कोई व्यक्ति हमारे कथन अथवा निर्देश पर किस रूप में अमल करेगा यह हमारे कहने के ढंग पर निर्भर करता है और सही तरीका वही है जो काम करनेवाले के चित्त में अनुकूल परिणाम उत्पन्न करें।

किसी को व्यंग्य या कटाक्षयुक्त वचन कहें तो उसके चित्त में क्षोभ पैदा होता है।

“आप कुछ जानते नहीं ...” इस प्रकार बात करने के ढंग से बात बिगड़ जाती है। बात कहने के ढंग पर बात बनती या बिगड़ती है। जिनकी वाणी में विनय-विवेक है वे थोड़े ही शब्दों में अपने हृदय के भाव प्रकट कर देते हैं। वे ऐसी बात नहीं बोलते जिससे किसी को ठेस पहुँचती हो।

सबके साथ सहानुभूति और नम्रता से युक्त मित्रता का बर्ताव करना चाहिए। संसार में सबसे ज्यादा मनुष्य ऐसे ही मिलेंगे जिनकी कठिनाईयाँ और कष्ट हमारी कल्पना से कहीं अधिक है। हम इस बात को समझ सकते हैं कि और किसी के भी साथ अनादर और द्वेष का व्यवहार न करके विशेष प्रेम का व्यवहार करो।

हमसे कोई बुरा बर्ताव करे तो उसके साथ भी हम अच्छा बर्ताव करें और ऐसा करके अभिमान न करें। दूसरों की भलाई में हम जितना ही अपने अहंकार और स्वार्थ को भूलेंगे उतना ही हमारा वास्तविक हित अधिक होगा।

अच्छा बर्ताव और निश्छल प्रेम का व्यवहार करके सबमें प्रेम और भलाई का वितरण करना चाहिए। यही सच्ची सहायता और सच्चा आश्वासन है। हम संसार से जैसा व्यवहार करेंगे वैसा ही हम वापस पाएंगे भी।

वाणी मनुष्य को ईश्वर की अनुपम देन है। मनुष्य का भाषा पर विशेष अधिकार है। भाषा के कारण ही मनुष्य इतनी उन्नति कर सका है। हमारी वाणी में मधुरता का जितना अधिक अंश होगा हम उतने ही दूसरों के प्रिय बन सकते हैं। हमारी बोली में माधुर्य के साथ-साथ शिष्टता भी होनी चाहिए।

मधुर वाणी मनोनुकूल होती है जिसके कानों में पड़ने पर चित्त द्रवित हो उठता है। वाणी की मधुरता हृदय-द्वार खोलने की कुंजी है। एक ही बात को हम कटु शब्दों में कहते हैं और उसी को हम मधुर बना सकते हैं। वार्तालाप की शिष्टता मनुष्य को आदर का पात्र बनाती है और समाज में उसकी सफलता के लिए रास्ता साफ़ कर देती है। कटु वाणी आदमी को रुष्ट कर सकती है तो इसके विपरीत मधुर वाणी दूसरे को प्रसन्न भी कर सकती है।

हमारी वाणी ही हमारी शिक्षा-दीक्षा, कुल की परंपरा और मर्यादा का परिचय देती है। इसलिए हमें वार्तालाप में व्यापारिक बातचीत एवं निजी बातचीत में थोड़ा अंतर रखना चाहिए। वाणी किसी भी स्थिति में कटु एवं अशिष्ट नहीं होनी चाहिए।

तमाशा

रविवार का दिन था। रमेश, मोहन, सोहन, मदन और उनके अन्य साथी सब गाँव के बरगद के पेड़ के नीचे बैठ कर गप्पें मार रहे थे। तभी दूसरे मुहल्ले के कुछ बच्चे चिल्लाते हुए आए और बोले- मंदिर के पास एक भालूवाला आया है। इतना सुनते ही बच्चों सब शोर करते हुए भालूवाले के पास पहुँच गए। भालूवाला मदारी भालू का नाच दिखाने लगा। सभी बच्चे भालू का नाच देख कर खिल-खिला कर हँस रहे थे। उन बच्चों में सोहन को याद आया कि कल उसके विद्यालय में गणित की परीक्षा है। इसलिए वह अपने मित्रों से कहा कि वह ज्यादा देर नहीं रुकेगा। उनके सभी मित्र उसकी बात पर ठहाके लगाने लगे और बोले बहुत पढ़ाकू हो गया है। एक दिन नहीं पढ़ोगे तो फेल नहीं हो जाओगे। यह बात सोहन को अच्छा नहीं लगा। वह वहाँ से घर चला गया और परीक्षा की तैयारी करने लगा। जब परीक्षा फल आया तो सोहन के अंक उसके साथियों से अधिक थे। वह खुश था।

कुछ वर्षों के बाद उसके साथी प्रतियोगी तैयारी में लगे थे। सोहन पढ़ता था जबकि उसके पास करते थे। सोहन दैनिक कार्य का समय-समय पर उसका अक्षरशः पालन

जब सोहन के मित्र मोबाइल में, टीवी में और अन्य खेल में अनावश्यक समय बिताते थे तब सोहन अपना पूरा समय अपने स्वास्थ्य और पढ़ाई में देता था। परिणामस्वरूप सोहन को एक अच्छी नौकरी मिल गई। अब उसके साथी उसे बधाई देने पहुँचे। सोहन ने उन लोगों को कहा- तुम लोगों को भी अच्छी नौकरी मिल सकती है। बस ईमानदारी से मेहनत करने की जरूरत है। उसने आगे कहा- हमें तमाशा देखने वालों में से नहीं बल्कि तमाशा दिखाने वालों में होना चाहिए। उसने उदाहरण देते हुए कहा- आज महेन्द्र सिंह धोनी, विराट

कोहली, रोहित शर्मा अपने मेहनत से लोगों को अपना क्रिकेट में उत्कृष्ट प्रदर्शन दिखा रहे हैं। वह आज तमाशा देखने वालों में नहीं बल्कि तमाशा दिखाने वालों में से है। आज उसके खेल की प्रतिभा के वजह से ही स्टेडियम में लोग उनके नाम का नारा लगाते हैं। यदि आज धोनी भीड़ का हिस्सा रहते तो धोनी नहीं बन पाते। कहने का अर्थ यह है कि हमें कुछ विशेष उपलब्धि प्राप्त करने के लिए भीड़ से अलग काम करना होगा। आज के दौर में अधिकांश युवा तमाशा देखने में शामिल हैं। अभी आप सब देखते होंगे कि जब कोई मैच या कोई नयी सिनेमा सिनेमा हॉल में लगता है तो लोग अपने मूल काम को छोड़ कर अपना समय व्यर्थ बर्बाद करते हैं। ऐसा करने से हम देश के लिए कुछ अच्छा कैसे कर सकते हैं। हमारे देश के जितने भी महान हस्ती हैं, उन्होंने अपने काम को प्राथमिकता दिया है। हमारे युवा साथियों में सकारात्मक ऊर्जा का भंडार है। अतः भारत के प्रत्येक युवा को ऊर्जा का सदुपयोग करना चाहिए। जब मन में



सुबोध कुमार

कनिष्ठ हिंदी अनुवादक

नकारात्मक विचार आए तो शारीरिक गतिविधि यथा- दौड़ना, फुटबॉल खेलना, तैराकी करना आदि किया जाना चाहिए। कहा जाता है खाली दिमाग शैतान का घर होता है। इसलिए हमें अपने मस्तिष्क को सदा अच्छे कार्यों में लगाना चाहिए। स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क का निर्माण होता है।

अंत में मैं यही कहना चाहूँगा कि यदि आप अपने देश को महान बनाना चाहते हैं तो तमाशा देखने वालों में नहीं बल्कि तमाशा दिखाने वालों में रहना होगा। यहाँ तमाशा दिखाने का अभिप्राय है अपने उत्कृष्ट कार्यों से परिवार, समाज और देश का मान-सम्मान बढ़ाना।



भूतिया नम्बर

वैसे तो मुझे भूत-प्रेत जैसी बातों पर विश्वास नहीं है पर थोड़ा बहुत डर तो सबके अंदर होता ही है जो कभी-कभार किसी घटना के कारण बढ़ भी जाता है।

बात उस समय की है जब मैं ग्रेजुएशन द्वितीय वर्ष की छात्रा थी। हम तीन बहनें और एक भाई हैं। उस समय मेरी बड़ी बहन सोनिया की शादी हो चुकी थी। मैं ग्रेजुएशन कर रही थी और मेरे दोनों छोटे भाई-बहन सोनू और सोनम दसवीं में थे, उनकी भी परीक्षा चल रही थी। मार्च का अंतिम सप्ताह था जिससे गर्मी का अनुभव होना प्रारंभ हो गया था। हम चारों भाई बहनों की एक समस्या यह थी कि हम सुबह जल्दी उठकर पढ़ नहीं पाते, हमें नींद आने लगती है, इसलिए हम देर रात तक पढ़ना ज्यादा पसंद करते हैं। उस रात भी हम देर रात तक पढ़ाई कर रहे थे, रात काफी हो चुकी थी, मेरी माँ और पिताजी दूसरे कमरे में सो रहे थे। पढ़ते-पढ़ते जब मेरा भाई थक गया तो वह एक पुराने समाचार पत्र को देखने लगा, उस अखबार के एक पन्ने पर लिखा था 'भूतिया नंबर' और एक मोबाइल नंबर लिखा था। साथ ही यह लिखा था कि अगर कोई इस नंबर को डायल करता है तो कुछ अजीब सी आवाज आती है और थोड़ी देर बाद उस भूतिया नंबर से कॉल बैक होता है और वो कॉल करने वाले के बारे में सबकुछ जान जाता है। "ये सब हटाओ और पढ़ाई करो", सोनम ने कहा और खिड़की के पर्दे हटाने लगी। बाहर ठंडी हवा चल रही थी। ऐसा लग रहा था कि बारिश होने वाली है। रात के साढ़े ग्यारह-पौने बारह बज रहे होंगे। सोनू ने मेरी तरफ देखते हुए कहा, "चलो कॉल करके देखते हैं"। मैंने भी सिर हिलाकर हामी भर दी। सोनू पिताजी की मोबाइल ले आया, उस समय हमारे पास मतलब हमारे पिताजी के पास नोकिया की छोटी वाली मोबाइल फोन हुआ करती थी। वह अखबार में दिये नंबर को डायल करने लगा, मैं और सोनम डरे हुए आँखें फाड़े भयभीत नजरो से सोनू को देख रहे थे। सोनू नंबर डायल करके फोन कान में लगा कर खड़ा था। अचानक उसने फोन ज़ोर से पटक दिया; फोन बिस्तर पर जा गिरा और तभी लाइट चली गई और साथ ही जोरों की बारिश होने लगी। दूर कहीं कोई उत्सव मनाया जा रहा था, जहाँ गाने बज रहे थे जिसकी आवाज और बारिश की आवाज मिलकर और भी भयानक माहौल बना रहे थे। फोन अब भी चालू थी, हमने उसे डिस्कनेक्ट करने की बहुत कोशिश की, पर वो डिस्कनेक्ट नहीं हुआ। डर के मारे हमारे हाथ-पांव काँप रहे थे। किसी तरह हिम्मत करके सोनू मोबाइल फोन को उठा

कर दूसरे कमरे में रख आया। सोनू के आते ही हमने उससे पूछा क्या हुआ? डर के मारे तो हम पहले ही काँप रहे थे उसने जो बताया उसे सुनकर तो हमारी सिट्टी-पिट्टी ही गुम हो गई। सोनू ने बताया कि उसके हैलो कहने पर थोड़ी देर तो कुछ भी आवाज नहीं आई, पर थोड़ी देर बाद अजीब सी आवाज में किसी ने पूछा "क्या बात है सोनू" तभी मेरे हाथ से फोन छूट गया। उस अंजान को सोनू का नाम न जाने कैसे पता चल गया। हम तीनों इतने डरे हुए थे कि अब पढ़ाई तो होने से रही, तो हम सब एक ही बिस्तर पर सर से लेकर पांव तक कंबल ढककर सो गए। मुझे बहुत गर्मी लग रही थी पर कंबल हटाने की मेरी हिम्मत नहीं हो रही थी। थोड़ी देर बाद जब मैंने कंबल हटाकर देखा तो मेरे दोनों भाई-बहन बिस्तर पर नहीं थे, घनघोर अंधेरे में मैं अकेली थी, मुझे उन दोनों पर बहुत गुस्सा आ रहा था। न जाने कब दोनों खिसक कर मम्मी-पापा के कमरे में चले गए। हारकर मैंने भी हिम्मत किया और उनके कमरे में जाने लगी, फोन में ज़ोर पर रखा हुआ था और वो अब भी चालू था। मैंने आँखें बंद कर किसी तरह उस कमरे को पार किया और उनके बीच सो गई। किसी तरह वो रात बीती। दूसरे दिन सोनू और सोनम दोनों की दसवीं की परीक्षा थी, दोनों परीक्षा देने जा चुके थे। मेरे पिताजी के हाथ में मोबाइल था जो अब ऑफ था। अचानक हमारे लैंडलाइन फोन पर रिंग हुआ, फोन पिताजी ने उठाया। थोड़ी देर बाद उन्होंने फोन रख दिया, मैंने पिताजी से पूछा, "किसका फोन था?", पिताजी ने कहा कि सोनू के किसी दोस्त का, पूछ रहा था परीक्षा कैसा जा रहा है? मैं सन्न रह गई, क्योंकि सोनू के बहुत कम दोस्त थे और जो थे वो उसके क्लास के ही थे जो सभी उस वक्त परीक्षा केंद्र पर होंगे, तो फिर उस समय किसने कॉल किया?

सच में उसके किसी दोस्त ने कॉल किया या फिर किसी भूत ने कॉलबैक किया ???



सुनेना कुमारी

पत्नी श्री राजेश कुमार,
वरिष्ठ लेखापरीक्षा
अधिकारी



आंतरिक शक्ति अर्थात इम्यूनिटी

सुना है कि -

18 वीं सदी ज्ञान की सदी थी। 19 वीं सदी विज्ञान की सदी थी। 20वीं सदी तनाव की सदी रही। 21 वीं सदी अवसाद (Depression) की सदी है।

वर्तमान में हम अवसाद (Depression) से रिलैक्स होने के लिए कई तरह के क्रियाकलाप अपनाते हैं होटल और सिनेमा जाते हैं, टीवी में सीरियल देखते हैं, घर में जानवर (Pets) पालते हैं और उनसे बातें करते हैं क्योंकि वह केवल सुनते हैं पलटकर जवाब नहीं देते, कहीं घुमने जाते हैं, सोशल मीडिया से जुड़ते हैं। इससे हम कुछ अवधि के लिए रिलैक्स तो होते हैं, पर पूर्णतः आराम नहीं मिलती।

आज बहुत से लोग तरह- तरह की बीमारियों से ग्रसित हो रहे हैं। स्वास्थ्य को लेकर बच्चे, बड़े, बूढ़े सभी परेशान हैं। काम इतना बढ़ गया है कि सुबह से शाम कब निकल जाता है पता ही नहीं चलता। खुद को समय देने के लिए समय का अभाव हो जाता है। इसका एक कारण यह है कि आज के समय में पैसा कमाना सबसे पहला एवं जरूरी काम हो गया है। इसी पैसे के कारण हम सभी अवसाद की ओर अपना कदम बढ़ा रहे हैं। यह कदम धीरे बड़े या तेजी से, जब हम गलत रास्ते पर होते हैं तब जीवन का क्षरण कर लेते हैं। फिर वही पैसे आगे चलकर कोरे कागज की भाँति प्रतीत होती है और कुछ काम नहीं आता है।



पुराने जमाने में किसी बीमारी को लेकर लंबी-लंबी दूरियां तय नहीं करनी पड़ती थी। बड़ी से बड़ी बीमारी का इलाज आसानी से हो जाया करता था। इसका कारण यह था कि उस समय हर घर में एक न एक डॉक्टर जरूर होते थे - पेशे से नहीं, ज्ञान से। वह कुछ ऐसे थे कि हमारा रहन सहन, पहनावा, खानपान एवं समय का सदुपयोग इत्यादि कार्य बिलकुल उस आधार पर होता था, जिसे आज हम विज्ञान कहते हैं।



शैतिका मोनी

पुत्री मनोज कुमार,
वरिष्ठ लेखापरीक्षा
अधिकारी

विगत वर्षों में हमलोगों ने देखा है कि कोरोना में बहुत से लोगों ने अपने परिजनों को खोया। यहाँ तक कि बड़े से बड़े पैसे वाले लोग भी बच नहीं पाए और दूसरी ओर, कोरोना के संपर्क में भी आकर कुछ गरीब लोग बच गए। इसका मुख्य कारण है व्यक्ति के अन्दर आंतरिक शक्तियों का विकास, जिसे मेडिकल साइंस ने इम्यूनिटी की संज्ञा दी है।

हम सब अपनी रोजमर्रा की जिंदगी एवं भागदौड़ से परेशान रहते हैं, दिमाग पर बोझ डाले रहते हैं। इससे टेंशन (Tension) अर्थात तनाव पैदा होता है। साइंस कहता है कि जब हम टेंशन में होते हैं तब हमारे किडनी के ऊपर ऐड्रिनल ग्लैंड (Adrenal Gland) के कॉर्टेक्स रीजन (Cortex Region) के जोना फैसिकुलेटा रिजन (Zona Fasciculata Region) से कॉर्टिसोल (Cortisol) नामक हार्मोन निकलता है जिसे एंटी स्ट्रेस हार्मोन (Antistress Hormone) के नाम से जानते हैं। यह हमारे स्ट्रेस को कम करने के दौरान इम्यून पावर को कम (Suppress) कर देता है।

कॉर्टिसोल प्रोपोर्शनल टू स्ट्रेस एंड रिवर्स प्रोपोर्शनल टू इम्यूनिटी (Cortisol proportionate to Stress and reverse proportionate to Immunity.)

इम्यूनिटी का मतलब होता है हमारे शरीर के अंदर अपने दुश्मनों से लड़ने एवं उन्हें मारने की रोग प्रतिरोधक क्षमता। यह क्षमता बचपन से ही, जब हमने जन्म लिया था, हमारे अंदर मौजूद होते हैं। यह इम्यूनिटी किसी जादूगर की छड़ी जैसी होती

हैं जो बड़ी से बड़ी बीमारी से लड़ने की ताकत रखती हैं। कोरोना काल में इम्यूनिटी की ताकत को हम सभी ने महसूस किया है।

परीक्षाकाल में अल्पावधि में भी पढ़कर हम पास हो जाया करते हैं, उस समय भी इम्यूनिटी ही काम करती है। परन्तु, उसी परीक्षाकाल में जब हम डरते हैं या स्ट्रेस लेते हैं तब यह इम्यूनिटी कमजोर पड़ जाती है और मनोनुकूल प्रदर्शन नहीं कर पाती हैं। हम सभी ने सुना भी है कि "जो डर गया, वो मर गया।"

अपनी इम्यूनिटी को बनाए रखने के लिए हमें आहार का व्यवहार सही करना होगा, अपनी भावनाओं एवं कार्यों के बीच सकारात्मक स्वचिन्तन करना होगा, ताकि जीवन में प्रसन्नता एवं मधुरता आए। पर इससे पहले अपने जिंदगी को एक सही नज़रिए से पहचानने की जरूरत है। एक समय के लिए यह सोचकर देखें जिंदगी में बहुत सारे पैसे कमाएँ, बहुत सारे दिखावे किये, इंसानियत एवं रिश्तों को दांव पर लगाकर अपने अहंकार एवं अभिमान को प्राथमिकता दी और एक दिन बीमारियों में, समय से पहले ही उलझकर रह गए और केवल खुद को ही नहीं, बल्कि पूरे परिवार को भी उलझा दिये, फिर डॉक्टर एवं अस्पताल के चक्कर काट रहे हैं। बच्चे भी छोटी छोटी गलतियों के कारण बीमार हो रहे हैं। ज़रा सी बारिश में भीगे नहीं की सर्दी, जुकाम, बुखार बहुत दिनों तक रह जाती है। छोटी सी उम्र में बच्चे पर थोड़ा-सा काम का बोझ आया कि कहने लगते हैं बच्चे डिप्रेशन में है। फिर वह दिन जब जिंदगी को अलविदा कहने का समय आएगा तब समझ में यह आएगा की जिंदगी में भागदौड़ तो बहुत किए पर शायद जीना ही भूल गए।

हम असल में यह भूल जाते हैं की जिंदगी जीने के लिए होती है अकूत धन कमाने के लिए नहीं। बेहिसाब धन कमाकर हम क्या ही जीत लेंगे, जब स्वयं को ही भूल जाएँगे। बेहिसाब धन कमाकर असल में हम कुछ पाते नहीं बल्कि बहुत कुछ खोते हैं। हमें अपनी

जिंदगी में अपने बच्चों, पैसे इत्यादि को लेकर टेंशन नहीं पालनी चाहिए। यह टेंशन हमारे शरीर को अंदर से खोखला बना देती है। बहुत से ऐसे लोगों को देखा गया है जो ढेरों पैसा कमाते हैं और रिलैक्स होने के लिए सप्ताह में दो से तीन बार केवल बाहर का खाना खाते हैं। मतलब कि सेहत को खराब करने के लिए महीने में कम से कम 10 बार पैसे खर्च करते हैं। क्या इससे तनाव दूर हुआ? और क्या हम सेहत को खराब करने के लिए पैसे कमाते हैं?

हम हर चीज़ को बदल नहीं सकते, पर उन चीज़ों से जरूर



बच सकते हैं जो हानिकारक है। हमें उन आदतों को अवश्य बदलना चाहिए। हमेशा याद रखना हैं कि हम कुछ भूलें या न भूलें, स्वयं को कभी नहीं भूलना है। स्वयं को जो भूलता है वह विवेकहीन है। अवसाद में वह कटू व्यवहार कर सकता है। अतः हमें विवेकहीनों को, उनके कटु व्यवहार के लिए क्षमा कर देना चाहिए, ताकि किसी प्रकार का तनाव हावी न हो।

एंजाइटी (Anxiety) के संदर्भ में भारत यू.एस.ए. एवं चीन से आगे है।

टाइम्स ऑफ इंडिया अप्रैल 2023 के अनुसार, भारत के युवाओं में डिप्रेशन 31 से 57 प्रतिशत के दर से बढ़ रही है।

बाजी

ठंड की एक अंधेरी रात थी। एक बैंक कर्मि अपने पुस्तक कक्ष में टहल रहा था और याद कर रहा था कि कैसे पंद्रह साल पहले उसने एक शाम एक पार्टी दी थी। वहाँ कई चालाक व बुद्धिजीवी लोग पार्टी में शामिल थे और ढेर सारी बातें चल रही थी। जिसमें एक गर्म मुद्दा उठा जो मृत्युदंड के बारे में था। अधिकांश अतिथिजन, जिनमें कई पत्रकार और बुद्धिजीवी लोग भी उपस्थित थे, वे मृत्युदंड पर अपनी स्वीकृति नहीं दे रहे थे। ऐसी सज़ा को नैतिकता के खिलाफ और मनुष्य जीवन के लिए उपयुक्त नहीं मानते थे। कुछ अतिथियों की राय थी कि मृत्युदंड के स्थान पर आजीवन कारावास होना ही बेहतर विकल्प है। "मैं आपसे सहमत नहीं हूँ," उनके मेजबान बैंक कर्मि ने कहा। "मैंने मृत्युदंड या आजीवन कारावास का परीक्षण नहीं किया है, लेकिन अगर कोई पहले से ही न्याय कर सकता है, तो मृत्युदंड आजीवन कारावास की तुलना में अधिक नैतिक और अधिक मानवीय है। मृत्युदंड एक व्यक्ति को तुरंत मार देता है, लेकिन आजीवन कारावास उसे धीरे-धीरे मारता है। कौन सा जल्लाद अधिक मानवीय है, वह जो आपको कुछ मिनटों में मार देता है या वह जो कई वर्षों के दौरान आपकी जान ले लेता है?" "दोनों ही समान रूप से अनैतिक हैं," मेहमानों में से एक ने टिप्पणी की, "क्योंकि दोनों का उद्देश्य एक ही है - जीवन को छीनना। राज्य ईश्वर नहीं है। जो चीज वह वापस नहीं कर सकता उसे लेने का अधिकार उसे नहीं हो सकता।" मेहमानों में एक युवा वकील भी था, जो पच्चीस साल का युवक था। जब उससे उसकी राय पूछी गई, तो उसने कहा: "मृत्युदंड और आजीवन कारावास समान रूप से अनैतिक हैं, लेकिन अगर मुझे मृत्युदंड और आजीवन कारावास के बीच चयन करना पड़े, तो मैं निश्चित रूप से दूसरे विकल्प का ही चयन करूंगा। किसी भी तरह जीना, बिल्कुल नहीं जीने से बेहतर है।" और इसके साथ एक जीवंत चर्चा शुरू हो गई। बैंक कर्मि, जो उन दिनों छोटा और अधिक घबराया हुआ था, अचानक उत्तेजना में बह गया; उसने अपनी मुट्ठी से मेज पर मारा और युवक पर चिल्लाया: "यह सच नहीं है! मैं तुमसे दो मिलियन की शर्त लगाता हूँ कि तुम पाँच साल तक एकांत कारावास में नहीं रहोगे।" "अगर तुम सच में यही कहना चाहते हो," युवक ने कहा, "मैं शर्त लगा लूंगा, लेकिन मैं पांच नहीं बल्कि पंद्रह साल तक रहूंगा।"

"पंद्रह? हो गया!" बैंक कर्मि चिल्लाया। "सज्जनों, मैं दो मिलियन दांव पर लगाता हूँ!"

"ठीक है! तुम अपने लाखों दांव पर लगाओ और मैं अपनी आज़ादी दांव पर लगाता हूँ!" युवक ने कहा।

और यह बेटुकी, मूर्खतापूर्ण शर्त पूरी हो गई। बैंक कर्मि, बिगड़ा हुआ और तुच्छ, जिसके पास अपनी गणना से परे लाखों थे, शर्त पर खुश

था। रात के खाने पर उसने युवक का मज़ाक उड़ाया और कहा:

"अभी भी वक्त है, सोच लो मेरे लिए तो दो मिलियन एक छोटी बात है, परंतु तुम अपने अनमोल जीवन के सबसे अच्छे तीन या चार साल खो रहे हो। मैं तीन या चार कहता हूँ, क्योंकि तुम ज़्यादा दिन नहीं रह पाओगे। तुम यह भी मत भूलो कि स्वैच्छिक कारावास अनिवार्य कारावास से कहीं ज़्यादा कठिन है। मुझे तुम्हारे लिए बेहद दुख है।"



डॉ. मंजेश परासर
सहायक निदेशक
(राजभाषा)

अब बैंक कर्मि, इधर-उधर घूमते हुए, यह सब याद कर रहा था, और खुद से पूछ रहा था: "उस शर्त का उद्देश्य क्या था? उस आदमी के जीवन के पंद्रह साल खोने और मेरे दो मिलियन बर्बाद करने से क्या फ़ायदा है? क्या यह साबित हो सकता है कि मृत्युदंड आजीवन कारावास से बेहतर या बुरा है? नहीं। यह सब बेटुका और निरर्थक साबित हुआ। मेरी ओर से यह एक लाड़-प्यार से पाले गए आदमी की सनक थी, और उसकी ओर से पैसे के लिए सिर्फ़ लालच ..."

उसे याद आया कि उस शाम क्या हुआ था। यह तय किया गया कि युवक को अपनी कैद के साल बैंक कर्मि के बगीचे में बने एक लॉज में सख्त निगरानी में बिताने होंगे। यह भी तय हुआ कि पंद्रह साल तक उसे लॉज की दहलीज पार करने, इंसानों को देखने, इंसानों की आवाज सुनने या पत्र और अखबार प्राप्त करने की आज़ादी नहीं होगी। उसे एक संगीत वाद्ययंत्र और किताबें रखने की छूट थी, और उसे पत्र लिखने, शराब पीने और धूम्रपान करने की भी इज़ाजत थी। समझौते की शर्तों के अनुसार, बाहरी दुनिया के साथ उसका एकमात्र संबंध उस उद्देश्य के लिए बनाई गई एक छोटी सी खिड़की से था। वह जो चाहे प्राप्त कर सकता था - किताबें, संगीत, शराब, इत्यादि - किसी भी मात्रा में वह ऑर्डर एक नोट में लिखकर दे सकता था एवं ये चीज़ें उसे केवल खिड़की के माध्यम से ही प्राप्त हो सकती थीं। समझौते में हर उस विवरण और हर छोटी-छोटी बात का प्रावधान था जो उसके इस कारावास को पूर्ण रूप से एकांतवास बनाती और युवक को ठीक पंद्रह साल तक वहां रहने के लिए बाध्य किया गया, जिसकी शुरुआत 14 नवंबर 1870 को बारह बजे से हुई और 14 नवंबर 1885 को बारह बजे तक रही। बात इतनी रोचक थी कि कैदी द्वारा शर्तों को तोड़ने की थोड़ी सी प्रयास, भले ही अंत से केवल दो मिनट पहले हो, बैंक कर्मि को उसे दो मिलियन का भुगतान करने के दायित्व से मुक्त कर देता।

अपने कारावास के पहले वर्ष में कैदी अकेलेपन और अवसाद से बुरी तरह पीड़ित था। उसके लॉज से दिन-रात पियानो की आवाज़ लगातार सुनी जा सकती थी। उसने शराब और तम्बाकू से इनकार कर दिया। उसने लिखा, शराब, इच्छाओं को उत्तेजित करती है, और इच्छाएँ कैदी की सबसे बड़ी दुश्मन हैं; और इसके अलावा, अच्छी शराब पीने और किसी को न देखने से ज़्यादा उबाऊ कुछ नहीं हो सकता। तम्बाकू ने उसके कमरे की हवा को खराब कर दिया। पहले वर्ष में उसने जो किताबें मंगवाई, वे मुख्य रूप से हल्के चरित्र की थीं; जटिल प्रेम कथानक वाले उपन्यास, सनसनीखेज और काल्पनिक कहानियाँ, इत्यादि।

दूसरे वर्ष लॉज में पियानो शांत था, और कैदी ने केवल क्लासिक पुस्तकों की माँग की। पाँचवें वर्ष में फिर से संगीत सुनाई देने लगा, और कैदी ने शराब माँगी। खिड़की से उसे देखने वालों ने कहा कि उस पूरे वर्ष उसने खाने-पीने और अपने बिस्तर पर लेटे रहने, बार-बार जम्हाई लेने और गुस्से में खुद से बात करने के अलावा कुछ नहीं किया। वह किताबें नहीं पढ़ता था। कभी-कभी रात में वह लिखने के लिए बैठ जाता था; वह घंटों लिखता रहता और सुबह होते ही वह जो कुछ भी लिखता था, उसे फाड़ देता। एक से अधिक बार उसे रोते हुए सुना जा सकता था।

छठे वर्ष में कैदी ने पूर्ण उत्साह से विभिन्न भाषाएँ, दर्शन और इतिहास का अध्ययन करना प्रारंभ कर दिया। उसने खुद को इन अध्ययनों में इतनी उत्सुकता से झोंक दिया - इतना कि बैंक कर्मों को उसके लिए मंगवाई गई पुस्तकें लाने के लिए काफी कुछ करना पड़ा। चार वर्षों के दौरान उसके अनुरोध पर लगभग छह सौ खंड खरीदे गए। इसी अवधि के दौरान बैंक कर्मों को अपने कैदी से निम्नलिखित पत्र मिला:

"मेरे प्यारे जेलर, मैं आपको ये पंक्तियाँ छह भाषाओं में लिख रहा हूँ। इन्हें उन लोगों को दिखाएँ जो इन भाषाओं को जानते हैं। उन्हें इन्हें पढ़ने दें। अगर उन्हें एक भी गलती नहीं मिलती तो मैं आपसे बगीचे में एक गोली चलाने की विनती करता हूँ। वह गोली मुझे दिखाएगी कि मेरे प्रयास व्यर्थ नहीं गए हैं। "कैदी की इच्छा पूरी हुई। बैंक कर्मों ने बगीचे में दो गोलियाँ चलाने का आदेश दिया।

दस वर्ष बीत जाने के बाद, कैदी मेज पर बैठ गया और सुसमाचार के अलावा कुछ भी नहीं पढ़ा। बैंक कर्मों को यह अजीब लगा कि एक आदमी जिसने चार साल में छह सौ विद्वान खंडों में महारत हासिल की थी, वह एक पतली सी किताब पर लगभग एक साल बर्बाद कर दे, जिसे समझना बहुत ही आसान है।

अपने कारावास के अंतिम दो वर्षों में कैदी ने हर तरह की बहुत सी किताबें पढ़ डाली। एक समय वह प्राकृतिक विज्ञानों में व्यस्त रहता था,

फिर वह बेरॉन या शेक्सपियर को भी पी गया था। कुछ ऐसे भी नोट उसने लिखे थे जिनमें उसने एक ही समय में रसायन विज्ञान की किताबें, चिकित्सा की एक पुस्तिका, और एक उपन्यास, और दर्शन या धर्मशास्त्र पर कुछ ग्रंथ मांगे थे।

बूढ़े बैंक कर्मों को पंद्रह वर्ष पूर्व हुए शर्त के बारे में सबकुछ याद आया और उसने सोचा:

"कल बारह बजे वह अपनी आज़ादी वापस पा लेगा। हमारे समझौते के अनुसार मुझे उसे दो मिलियन देने चाहिए। अगर मैं उसे दे भी देता हूँ, तो मेरा सब कुछ खत्म हो जाएगा: मैं पूरी तरह बर्बाद हो जाऊँगा।"

पंद्रह साल पहले, उसके लाखों डॉलर उसकी गिनती से परे थे; अब वह खुद से यह पूछने से डरता था कि उसके कर्ज या उसकी संपत्ति में से कौन बड़ा है। स्टॉक एक्सचेंज पर बेतहाशा जुआ, बेतहाशा सट्टेबाजी और उत्तेजना, जिससे वह बढ़ती उम्र में भी उबर नहीं पाया था, ने धीरे-धीरे उसके भाग्य को खत्म कर दिया था और गर्वित, निडर, आत्मविश्वासी करोड़पति एक मध्यम दर्जे का बैंक कर्मों बन गया था, जो अपने निवेश में हर उतार-चढ़ाव से काँपता था। "शापित शर्त!" बूढ़े आदमी ने निराशा में अपना सिर पकड़ते हुए बुदबुदाया, "वह आदमी क्यों नहीं मरा? वह अभी केवल चालीस साल का है। वह मुझसे मेरा आखिरी पैसा भी ले लेगा, वह शादी करेगा, जीवन का आनंद उठाएगा, एक्सचेंज पर जुआ खेलेगा; जबकि मैं उसे भिखारी की तरह ईर्ष्या से देखूँगा, और हर दिन उससे एक ही वाक्य सुनूँगा: 'मैं अपने जीवन की खुशी के लिए तुम्हारा ऋणी हूँ, मुझे तुम्हारी मदद करने दो!' नहीं, यह बहुत ज्यादा है! दिवालियापन और अपमान से बचने का एकमात्र तरीका उस आदमी की मृत्यु है!"

तीन बज गए, घर में हर कोई सो रहा था। बाहर ठंडे पेड़ों की सरसराहट के अलावा कुछ भी नहीं सुनाई दे रहा था। बिना शोर किए, उसने एक तिजोरी से उस दरवाजे की चाबी निकाली जो पंद्रह साल से नहीं खुली थी, अपना ओवरकोट पहना और घर से बाहर चला गया।

बगीचे में अँधेरा और ठंड के साथ बारिश भी हो रही थी। चौकीदार मौसम से बचने के लिए कहीं छुप गया था। बूढ़ा बैंक कर्मों अँधेरे में चुपचाप लॉज के प्रवेश द्वार पर चला गया। कैदी के कमरे की तरफ जाने वाले दरवाजे पर लगी सीलें बिल्कुल पंद्रह वर्ष पूर्व जैसी ही थीं। उसने उसी छोटी खिड़की से अंदर की ओर देखा। कैदी के कमरे में एक मोमबत्ती मात्र कमरे को प्रकाशित कर रही थी। कैदी मेज़ पर ही बैठा था। उसकी पीठ, सिर के बाल और हाथों के अलावा कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था। चारों तरफ किताबें बिखरी थी।

कुछ मिनट बीत गए और कैदी ने कोई भी हलचल नहीं की। पंद्रह साल की कैद के बाद शायद वह स्थिर हो गया था। बैंकर ने अपनी



ऊँगली से खिड़की पर नॉक किया परंतु कैदी ने प्रतिक्रिया में कोई हरकत नहीं की। फिर बैंकर ने सावधानी से दरवाजे की सील तोड़ी और ताले को खोलने का प्रयास करने लगा। जंग के कारण ताले से कुछ आवाज़ आई और दरवाजे से कर्कश आवाज़ निकल पड़ी। बैंकर को लगा कि शायद अब वह उठ कर सामने आ जाएगा परंतु कुछ समय के उपरांत भी कमरे में हमेशा की तरह शांति ही थी। बूढ़ा बैंक कर्मी अंदर जाने को आगे बढ़ा।

आज मेज़ पर एक कंकाल था जिसकी त्वचा उसकी हड्डियों पर कसी हुई थी, उसके केश लंबे हो गए थे और दाढ़ी भी बहुत बड़ी हो गई थी। उसका चेहरा पीला पड़ गया था, उसके गाल का मांस जबड़ों से सट गया था, उसके हाथ इतने पतले और नाजुक दिख रहे थे कि वह भयानक दिख रहा था। उसे देखकर कोई भी यह विश्वास नहीं कर सकता था कि वह केवल चालीस वर्ष का था। वह सो रहा था... उसके झुके हुए सिर के सामने मेज़ पर कागज़ की एक शीट पड़ी थी जिस पर बढ़िया लिखावट में कुछ लिखा हुआ था।

"बेचारा!" बैंकर ने सोचा, "वह सो रहा है और शायद लाखों पैसों के सपने देख रहा है और मुझे बस इस अधमरे आदमी को बिस्तर पर पटककर तकिए से उसे थोड़ा दबाना है, और सबसे ईमानदार विशेषज्ञ को भी हिंसक मौत का कोई निशान नहीं मिलेगा। लेकिन आइए पहले पढ़ें कि उसने यहाँ क्या लिखा है ... "बैंकर ने मेज़ से पन्ना उठाया और इस प्रकार पढ़ा:

"कल बारह बजे मैं अपनी आज़ादी और दूसरे लोगों से मिलने-जुलने का अधिकार वापस पा लूँगा, लेकिन इससे पहले कि मैं इस कमरे से निकलूँ और धूप देखूँ, मैं तुमसे कुछ शब्द कहना ज़रूरी समझता हूँ। मैं तुम्हें साफ़ विवेक के साथ बताता हूँ, जैसे कि ईश्वर के सामने, जो मुझे देखता है, कि मैं आज़ादी, जीवन और स्वास्थ्य और उन सभी चीज़ों से घृणा करता हूँ जिन्हें तुम्हारी किताबों में दुनिया की अच्छी चीज़ें कहा जाता है।"

"पंद्रह साल से मैं सांसारिक जीवन का गहन अध्ययन कर रहा हूँ यह सच है कि मैंने न तो धरती देखी है और न ही मनुष्य, लेकिन आपकी पुस्तकों में मैंने सुगंधित शराब पी है, मैंने गीत गाए हैं, हिरणों और जंगली सूअरों का शिकार किया है, स्त्रियों से प्रेम किया है... आपके कवियों और प्रतिभाओं के जादू से निर्मित बादलों जैसी अलौकिक सुंदरियां रात में मुझसे मिलने आई हैं और मेरे कानों में ऐसी अद्भुत कहानियां फुसफुसायी हैं, जिन्होंने मेरे दिमाग को चक्कर में डाल दिया है। आपकी पुस्तकों में मैं एल्बर्ज़ और मोंट ब्लांक की चोटियों पर चढ़ गया हूँ और वहां से मैंने सूरज को उगते देखा है और शाम को उसे आसमान, समुद्र और पर्वत-शिखरों को सोने और लाल रंग से भरते देखा है। मैंने वहां से बिजली को अपने सिर के ऊपर चमकते और

तूफानी बादलों को चीरते हुए देखा है। मैंने हरे भरे जंगल, खेत, नदियां, झीलें, शहर देखे हैं... आपकी किताबों में मैंने खुद को अथाह गड्ढे में फेंक दिया है, चमत्कार किए हैं, मारे गए हैं, शहरों को जला दिया है, नए धर्मों का प्रचार किया है, पूरे राज्यों पर विजय प्राप्त की है..आपकी किताबों ने मुझे कई प्रकार के ज्ञान से भर दिया है। मनुष्य के अशांत विचारों ने युगों में जो कुछ भी बनाया है, वह मेरे मस्तिष्क में एक छोटे से कम्पास में संकुचित है। मुझे पता है कि मैं आप सभी से अधिक बुद्धिमान हूँ और मैं आपकी किताबों को तुच्छ समझता हूँ, मैं ज्ञान और इस दुनिया के आशीर्वाद को तुच्छ समझता हूँ। मेरे ख्याल से यह सब क्षणभंगुर, भ्रामक और एक मृगतृष्णा की तरह ही है। आप गर्वित, बुद्धिमान और अच्छे हो सकते हैं, लेकिन मृत्यु आपको पृथ्वी के चेहरे से मिटा देगी मानों आप फर्श के नीचे बिल बनाने वाले चूहों से अधिक कुछ नहीं थे, और आपकी संतान, आपका इतिहास, आपकी अमर प्रतिभाएँ सांसारिक दुनिया के साथ जल जाएँगी या जम जाएँगी।

तुमने अपना विवेक खो दिया है और गलत रास्ता अपना लिया है। तुमने झूठ को सत्य और धिनौनेपन को सुंदरता मान लिया है। तुम आश्चर्यचकित होंगे यदि किसी अजीबोगरीब घटना के कारण अचानक सेब और संतरे के पेड़ों पर फलों की जगह मेंढक और छिपकलियाँ उगने लगें या गुलाब अपनी खुशबू को छोड़ पसीने से तर घोड़े की तरह महकने लगें; इसलिए मैं तुम पर आश्चर्यचकित हूँ। तुम्हारे जीवन के हर पहलू से मैं कितना घृणा करता हूँ, यह साबित करने के लिए मैं उन बीस लाख रुपये को त्यागता हूँ जिनके बारे में मैंने कभी सुंदर सपना देखा था और जिन्हें अब मैं घृणा करता हूँ। अपने आप को पैसे के अधिकार से वंचित करने के लिए मैं तय समय से पाँच घंटे पहले यहाँ से चला जाऊँगा, और इस तरह समझौता तोड़ दूँगा..."

जब बैंकर ने यह पढ़ा तो उसने पृष्ठ को मेज़ पर रख दिया, उस हड्डियों के कंकाल के सिर को चूमा, और रोता हुआ लॉज से बाहर चला गया। किसी और समय नहीं, यहाँ तक कि जब वह स्टॉक एक्सचेंज में भारी नुकसान उठा चुका था, तब भी उसने खुद के लिए इतनी बड़ी अवमानना महसूस नहीं की थी। जब वह घर पहुँचा तो वह अपने बिस्तर पर लेट गया, लेकिन उसके आँसू और भावनाएँ उसे घंटों सोने नहीं दे रही थीं।

अगली सुबह चौकीदार पीले चेहरे के साथ दौड़ा और उसे बताया कि उन्होंने लॉज में रहने वाले आदमी को खिड़की से बाहर बगीचे में चढ़ते, गेट पर जाते और गायब होते देखा है। बैंकर तुरंत नौकरों के साथ लॉज गया और अपने कैदी के भागने का पता लगाया। अनावश्यक चर्चा को भड़काने से बचने के लिए, उसने टेबल से वह लिखावट उठा ली जिसमें लाखों का त्याग किया गया था।

(प्रस्तुत कहानी एन्टन चेकोव की 'द बेट' का अनुवाद है।)

प्रशंसा पत्र

U.BR.36./05-1005/02/0-4/1025-22

1/800986/2024

कार्यालय महालेखाकार (लेखापरीक्षा-II) राजस्थान, जयपुर

क्रमांक: रा.भा.अ./फाइल सं.-एच-11005-02/2024-25/ दिनांक: 27-11-2024

सेवा में,

वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी (राजभाषा),
कार्यालय प्रधान महालेखाकार (लेखापरीक्षा) झारखंड,
राँची

विषय: राजभाषा हिंदी गृह-पत्रिका "उदयाचल" के 41वें अंक पर अभिमत - संवर्धित।

महोदय,

आपके कार्यालय द्वारा प्रकाशित राजभाषा हिंदी गृह-पत्रिका "उदयाचल" के 41वें अंक की प्रति की प्रति हुई है। आपकी पत्रिका के आकर्षक आवरण पृष्ठ के साथ-साथ इसकी साज-सज्जा सुंदर है और रचनाओं की विषयवस्तु भी प्रशंसनीय है।

"उदयाचल" के संपादक मंडल एवं सभी रचनाकारों को पत्रिका के सफल प्रकाशन के लिए बधाई तथा पत्रिका की प्रगति के लिए हार्दिक शुभकामनाएं।

WAZIR SINGH

हिंदी अधिकारी
(ई-मेल: rajbhasha.raj2.au@cag.gov.in)

Digitally signed by
Wazir Singh
Date: 27-11-2024 10:36:59

हजि./हजि/पत्रिका/समीक्षा/2024-25/1/800986/25/14.09.2021

1/797347/2024



कार्यालय प्रधान महालेखाकार (लेखापरीक्षा),
पंजाब, चंडीगढ़-160017
OFFICE OF THE PRINCIPAL ACCOUNTANT
GENERAL (AUDIT) PUNJAB,
CHANDIGARH-160017
फोन : 0172-2783168, फैक्स 0172-2703149
Email: agaupunjab@cag.gov.in



क्रमांक- हि.अ./हिंदीपत्रिकासमीक्षा/2024-25/1/797347/2024

दिनांक: 21-11-2024

सेवा में

वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी (राजभाषा)
कार्यालय प्रधान महालेखाकार (लेखापरीक्षा)
झारखंड, राँची

विषय: राजभाषा गृह पत्रिका "उदयाचल" के 41वें अंक की समीक्षा।

महोदय,

आपके कार्यालय से प्रकाशित "उदयाचल" के 41वें अंक की प्रति प्राप्त हुई, तदर्थ धन्यवाद। पत्रिका में सम्मिलित सभी रचनाएं सुपाठ्य, बोधगम्य तथा उच्चकोटि की हैं विशेषकर श्री सदानंद लस्कर की "वृद्धाश्रम में एक माँ की यादें", श्री इंद्र कुमार झा की "पूजन के फूल" एवं श्री अमर आनंद मिश्र की "जिन्दगी के सफर में" आदि रचनाएँ अत्यंत मनोहर हैं। पत्रिका की साज-सज्जा एवं विषयवस्तु का सुंदर प्रस्तुतिकरण अत्यंत प्रशंसनीय है। राजभाषा हिन्दी की प्रगति की दिशा में पत्रिका का यह अंक एक सारहनीय प्रयास है।

पत्रिका के रचनाकारों एवं संपादक मंडल को सफल संपादन तथा प्रकाशन हेतु हार्दिक बधाई। पत्रिका के निरंतर उज्ज्वल भविष्य हेतु शुभकामनाएँ।

भवदीया

EKTA
(हिंदी अधिकारी)

Digitally signed by
Ekta
Date: 21-11-2024 15:31:28

प्रधान महालेखाकार (लेखापरीक्षा-I),
तमिलनाडु का कार्यालय,
"लेखापरीक्षा भवन", 361, अण्णा
साहे, तेनाम्पेट, चेन्नै-600018



OFFICE OF THE PRINCIPAL
ACCOUNTANT GENERAL (AUDIT-I),
TAMILNADU, "LEKHA PARIKSHA
BHAVAN" 361, ANNA SALAI,
TEYNAMPET, CHENNAI-600018

सं. प्र.मले. (लेप-I)/हिं. अनु./प्रशं. पत्र/14-02/2024-25/46

दि.: 20.11.2024

सेवा में

वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी (राजभाषा)
प्रधान महालेखाकार (लेखापरीक्षा)
का कार्यालय
झारखण्ड, राँची - 834002

महोदय,

विषय: हिन्दी पत्रिका "उदयाचल" पर अभिमत

आपके कार्यालय की हिन्दी ई-पत्रिका उदयाचल का 41 वें अंक की प्रति प्राप्त हुई। तदर्थ सादर धन्यवाद। राजभाषा हिन्दी के विकास यात्रा में पत्रिका के माध्यम से एक जन की भावना एवं विचारों को शब्दों की माला में पिरोकर अन्य जनों तक पहुंचाने का प्रयास सच में प्रशंसनीय है। पत्रिका की साज-सज्जा एवं कलेवर भी अच्छी है। पत्रिका में सम्मिलित समस्त रचनाएं रोचक एवं मर्मस्पर्शी हैं। कार्यालय के विभिन्न गतिविधियों व कार्यक्रमों से संबंधित छायाचित्रों, चित्रकलाओं का प्रस्तुतीकरण भी अत्यंत सराहनीय है। पत्रिका के उज्ज्वल भविष्य और निरंतर प्रगति की कामना के साथ पत्रिका के कुशल संपादन एवं प्रकाशन के लिए संपादन मंडल को हार्दिक बधाई एवं शुभकामनाएं।

सधन्यवाद!

भवदीया,
हस्ता/-
चिबी टी. मांजुरान
हिन्दी अधिकारी
कार्यालय प्र. मले. (लेप-I), तमिलनाडु

Admin/U.BR./05(67)/2022-23

1/797779/2024

भारतीय लेखापरीक्षा और लेखा विभाग
काजीपूर प्रधान निदेशक लेखापरीक्षा (केन्द्रीय) लखनऊ



INDIAN AUDIT AND ACCOUNTS DEPARTMENT
Office of the Principal Director of Audit (Central) Lucknow

पत्रांक सं.: प्र.म.नि.(के.)/प्रशासन/रा.भा.हि./फ.सं.82047/2024-25/1/797779/2024
दिनांक: 25-11-2024

सेवा में,

हिंदी अधिकारी (राजभाषा अनुभाग)
प्रधान महालेखाकार (लेखापरीक्षा) का कार्यालय,
झारखण्ड, राँची-834002

विषय - गृह पत्रिका "उदयाचल" के 41वें अंक की ई-प्रति के सम्बन्ध में।

आदरणीय महोदय/महोदया,

आपके कार्यालय द्वारा प्रेषित गृह पत्रिका "उदयाचल" के 41वें अंक की ई-प्रति प्राप्त हुई है। तदर्थ धन्यवाद। पत्रिका के माध्यम से राजभाषा हिंदी के सृजनात्मक उत्थान हेतु आपके कार्यालय के समस्त अधिकारियों एवं कर्मचारियों द्वारा किया गया प्रयास अति सराहनीय है।

पत्रिका का यह अंक साज-सज्जा एवं मुद्रण स्पष्टता के कारण बहुत ही आकर्षक एवं मनोहारी बन पड़ा है साथ ही पत्रिका में समाविष्ट रचनाएं "बचाओ जल, बेहतर होगा कल", "भारत की सौफ्ट पॉवर" एवं "भारत में लैंगिक असमानता" जानवर्धक, प्रेरणादायी एवं पठनीय हैं। पत्रिका में समाविष्ट अन्य सभी रचनाएँ अत्यंत प्रेरक, रुचिकर एवं जानवर्धक हैं। पत्रिका के प्रकाशन हेतु संपादक मंडल एवं रचनाकारों का हार्दिक अभिनन्दन एवं शुभकामनाएँ।

भवदीया,

Digitally signed by
Ritesh Chhabra
Date: 25-11-2024 16:57:18

वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी /प्रशासन

पुनीत खान, ऑडिट चकम, टीसी-35-वी-1, विभुति खण्ड, गोमती नगर, लखनऊ-226010 (उ.प्र.) दूरभाष : 0522-2970789, फ़ैक्स : 0522-2970780 (व.नि.)
3rd Floor, Audit Bhawan, T.C.-35-V-1, Vibhuti Khand, Gomti Nagar, Lucknow-226010 (U.P.) Phone: 0522-2970789, Fax: 0522-2970780 (FD)



vo V29e

गणतंत्र दिवस की झलक

हिंदी पखवाड़ा 2024- चित्रकला प्रतियोगिता की झलक



हिंदी पखवाड़ा समापन समारोह (27.09.2024) के दौरान हास्य कवि सम्मेलन का आयोजन



हिंदी कार्यशाला में व्याख्यान देते सहायक निदेशक (राजभाषा)



हिंदी पखवाड़ा समापन समारोह (27.09.2024) के दौरान उप महालेखाकार महोदय द्वारा पुरस्कार वितरण

